e-ISSN: 2319-8753 | p-ISSN: 2347-6710

IJIRSET

International Journal of Innovative Research in
SCIENCE | ENGINEERING | TECHNOLOGY

INTERNATIONAL JOURNAL OF INNOVATIVE RESEARCH

IN SCIENCE | ENGINEERING | TECHNOLOGY

Volume 13, Issue 6, June 2024

INTERNATIONAL STANDARD SERIAL NUMBER INDIA

Impact Factor: 8.423

9940 572 462 | 6381 907 438 | ijirset@gmail.com | www.ijirset.com

International Journal of Innovative Research of Science, Engineering and Technology (IJIRSET)

Impact Factor 8.423

|www.ijirset.com | A Monthly Peer Reviewed & Referred Journal | e-ISSN: 2319-8753; p-ISSN: 2347-6710|

|Volume 13, Issue 6, June 2024|

|DOI: 10.15680/IJIRSET.2024.1306169|

1857 की क्रांति में गोडवाड़ क्षेत्र का योगदान

Praveen

B.Sc., M.A., Department of History, B.Ed., NET, Pali, Rajasthan, India

सार: 1857 के समय राजस्थान के कई राजपूत ब्रिटिश सरकार के खिलाफ़ थे। ये ब्रितानियों के शासन से संतुष्ट नहीं थे जिससे इनके मन में सरकार के खिलाफ़ क्रांति के बीज उत्पन्न होने लगे। इन लोगों के साथ आम जनता भी शामिल हो गई। राजस्थान के कई इलाकों में इस विद्रोह की ज्वाला भड़की थी जिनमें निम्न नाम उल्लेखनीय हैं।

I. परिचय

सबसे पहले गोडवाड़ में इस विद्रोह की शुरू आत हुई थी। इसके पीछे मुख्य कारण यह था कि ब्रिटिश सरकार ने अजमेर की 15वीं बंग़ाल इन्फ़ेन्ट्री को गोडवाड़ भेज दिया था क्योंकि सरकार को इस पर विश्‍वास नहीं था। सरकार के इस निर्णय से सभी सैनिक नाराज हो गये थे और उन्होंने ब्रिटिश सरकार के खिलाफ़ क्रांति का आगाज कर दिया। इसके अतिरिक्त ब्रिटिश सरकार ने बम्बई के सैनिकों को गोडवाड़ में बुलवाया और पूरी सेना की जंाच पड़ताल करने को कहा। ब्रिटिश सरकार ने गोडवाड़ में कई तोपे तैयार करवाई। इससे भी गोडवाड़ के सैनिक नाराज हो गये और उन्होंने विद्रोह कर दिया। सेना ने कई ब्रितानियों को मौत के घाट उतार दिया साथ ही साथ उनकी सम्पत्ति को भी नष्ट कर दिया। इन सैनिकों के साथ अन्य लोग भी शामिल हो गये।

गोडवाड़ की घटना की खबर मिलते ही 3 जून 1857 को नीमच के विद्रोहियों ने कई ब्रितानियों को मौत के घाट उतार दिया। फ़लस्वरू प ब्रितानियों ने भी बदला लेने की योजना बनाई। उन्होंने 7 जून को नीमच पर अपना अधिकार कर लिया। बाद में विद्रोही राजस्थान के दूसरे इलाकों की तरफ़ बढ़ने लगे।

यहाँ के कुछ लोग राजा तख्त सिंह के शासन से रुष्ट थे। जिसके कारण एक दिन यहाँ के सैनिकों ने इनके खिलाफ़ विद्रोह कर दिया। उनके साथ आउवा के ब्रिटिश विरोधी कुशाल सिंह भी थे।
कुशाल सिंह का सामना करने के लिये लेफ़्टिनेंट हीथकोट के साथ गोडवाड़ की सेना आई थी लेकिन कुशाल सिंह ने इन को परास्त कर दिया। बाद में ब्रितानी सेना ने आउवा के किले पर आक्रमण किया लेकिन उनको भी हार का मुँह देखना पड़ा लेकिन[5,6,7] ब्रिगेडियर होम्स उस पराजय का बदला लेना चाहता था इसलिये उसने आउवा पर आक्रमण किया अब कुशाल सिंह ने किले को छोड़ दिया और सलुम्बर चले गये। कुछ दिनों बाद ब्रितानियों ने आउवा पर अधिकार कर लिया और वहा आतंक फ़ैलाया ।

मेवाड़
मेवाड़ के सामंत ब्रितानियों व महाराणा से नाराज थे। इन सामन्तों में आपसी फ़ूट भी थी । महाराणा ने मेवाड़ के सामन्तों को ब्रितानियों की सहायता करने की आज्ञा दी। इसी समय सलुम्बर के रावत केसरी सिंह ने उदयपुर के महाराणा को चेतावनी दी कि यदि आठ दिन में उनके परम्पराग़त अधिकार को स्वीकार न किया गया तो वह उनके प्रतिद्वंदी को मेवाड़ का शासक बना देंगे। सलुम्बर के रावत केसरी सिंह ने आउवा के ठाकुर कुशाल सिंह को अपने यहा यहा शरण दी। इसी समय तांत्या टोपे ने राजपूताने की ओर कूच किया। 1859 में नरवर के मान सिंह ने उसके साथ धोखा किया और उसे गिरफ़्तार कर लिया। यद्यपि सामंतों ने प्रत्यक्ष रू प से ब्रिटिश सरकार का विद्रोह नहीं किया परन्तु विद्रोहियों को शरण देकर इस क्रांति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

कोटा
ब्रिटिश अधिकारी मेजर बर्टन ने कोटा के महाराजा को बताया यहां के दो चार ब्रिटिश विरोधी अधिकारियों को ब्रिटिश सरकार को सौंप देना चाहिये। लेकिन महाराजा ने इस काम में असमर्थता जताई तो ब्रितानियों ने महाराजा पर आरोप लगाया कि वह विद्रोहियों से मिले हुए हैं। इस बात की खबर मिलते ही सैनिकों ने मेजर बर्टन को मार डाला। विद्रोहियों ने राजा के महल को घेर लिया, फ़िर राजा ने करौली के शासक से सैनिक सहायता मांगी। करौली के शासक ने सहयोग किया और विद्रोहियों को महल के पीछे खदेड़ा। इसी समय जनरल एच.जी.राबर्टस अपनी सेना के साथ चम्बल नदी के किनारे पहँुचा। उसे देखकर विद्रोही कोटा से भाग गये।

राज्य के अन्य क्षेत्रों में विद्रोह
इस विद्रोह में अलवर के कई नेताओ ने हिस्सा लिया। जयपुर में उस्मान खां और सादुल्ला खां ने विद्रोह कर दिया। टोंक में सैनिकों ने विद्रोह कर दिया ओर नीमच के विद्रोहियों को टोंक आने का निमंत्रण दिया। इन्होने टोंक के नवाब का घेरा डाल कर उनसे बकाया

International Journal of Innovative Research of Science, Engineering and Technology (IJIRSET)

Impact Factor 8.423

|www.ijirset.com | A Monthly Peer Reviewed & Referred Journal | e-ISSN: 2319-8753; p-ISSN: 2347-6710|

|Volume 13, Issue 6, June 2024|

|DOI: 10.15680/IJIRSET.2024.1306169|

वेतन वसूल किया। इसी तरह बीकानेर के शासक ने नाना साहब को सहायता का आश्वासन दिया था। और तांत्या टोपे की सहायता के लिये दस हजार घुड़सवार सैनिक भेजे। यद्यपि राजस्थान के अधिकांश शासक पूरे विद्रोह काल में ब्रितानियों के प्रति वफ़ादार रहे, फ़िर भी विद्रोहियों के दबाव के कारण उन्हें यत्र-तत्र विद्रोहियों को समर्थन प्रदान करना पड़ा।
ब्रितानियों को भारत से बाहर निकालने के लिए युगाब्द 4659 (सन् 1857) में हुआ स्वतंत्रता का युद्ध भारत का प्रथम स्वतंत्रता संग्राम कहा जाता है। देखा जाए तो स्वतंत्रता के संघर्ष की शुरुआत महाराणा हम्मीर सिंह ने की थी। वीरों में वीरोत्तम महाराणा हम्मीर ने मुस्लिम आक्रमणकारियों का बढ़ाव काफ़ी समय तक रोके रखा। वस्तुतः सिसोदिया वंश का पूरा इतिहास ही भारत की स्वतंत्रता के लिए किए गए संघर्ष का इतिहास है। लेकिन ब्रितानियों के ख़िलाफ़ पूरे भारत में एक साथ और योजनाबद्ध युद्ध सन् 1857 में लड़ा गया, इसीलिए इतिहासकारों ने इसे प्रथम स्वतंत्रता संग्राम बताया।

क्रांति के इस महायज्ञ को धधकाने की योजना अजीमुल्ला खाँ तथा रंगोबापूजी ने लंदन में बनाई थी। योजना बनाकर ये दोनों उत्कट राष्ट्र-भक्त पेशवा के पास आए और उन्हें इस अद्भुत समर का नेतृत्व करने को कहा। सैनिक अभियान के नायक के रूप में तात्या टोपे को तय किया गया। संघर्ष के लिए संगठन खड़ा करने तथा जन-जागरण का काम पूरे दो साल तक किया गया।

मौलवी, पंडित और संन्यासी पूरे देश में क्रांति का संदेश देते हुए घूमने लगे। नाना साहब तीर्थ-यात्रा के बहाने देशी रजवाड़ों में घूमकर उनका मन टटोलने लगे। आल्हा के बोल, नाटक मंडलियाँ और कठपुतलियों के खेल के द्वारा स्वधर्म और स्वराज्य का संदेश जन-जन में पहुँचाया जाने लगा। क्रांति का प्रतीक लाल रंग का कमल सैनिक छावनियों में एक से दूसरे गाँव में घूमते पूरे देश की यात्रा करने लगा। इतनी ज़बरदस्त तैयारी के बाद संघर्ष की रूप-रेखा बनी। यह सब काम इतनी सावधानी से हुआ कि धूर्त ब्रितानियों को भी इसका पता तोप का पहला गोला चलने के बाद ही लगा।

राजस्थान में पहली चिंगारी
इस अपूर्व क्रांति-यज्ञ में राजसत्ता के सपूतों ने भी अपनी समिधा अर्पित की। देश के अन्य केंद्रों की तरह राजस्थान में भी सैनिक छावनियों से ही स्वतंत्रता-संग्राम की शुरुआत हुई। उस समय ब्रितानियों ने राजपूताने में 6 सैनिक छावनियाँ बना रखी थी। सबसे प्रमुख छावनी थी गोडवाड़ की। अन्य छावनियाँ थी- नीमच, ब्यावर, गोडवाड़ (टोंक), एरिनपुरा (गोडवाड़) तथा खैरवाड़ा (उदयपुर से 100 कि.मी. दूर)। इन्हीं छावनियों की सहायता से ब्रितानियों ने राजपूताना के लगभग सभी राजाओं को अपने वश में कर रखा था। दो-चार राजघरानों के अतिरिक्त सभी राजवंश ब्रितानियों से संधि कर चुके थे और उनकी जी हजूरीमें ही अपनी शान समझते थे। इन छावनियों में भारतीय सैनिक पर्याप्त संख्या में थे तथा रक्त कमल और रोटी का संदेश उनके पास आ चुका था।

राजपूताने (राजस्थान) में क्रांति का विस्फोट 28 मई 1857 को हुआ। राजस्थान के इतिहास में यह तिथि स्वर्णाक्षरों में लिखी जानी चाहिए तथा हर साल इस दिन उत्सव मनाया जाना चाहिए। इसी दिन दोपहर दो बजे गोडवाड़ में तोप का एक गोला दाग़ कर क्रांतिकारियों ने युद्ध का डंका बजा दिया। संपूर्ण देश में क्रांति की अग्नि प्रज्जवलित करने के लिए 31 मई, रविवार का दिन तय किया गया था, किंतु मेरठ में 10 मई को ही स्वातंत्र्य समर का शंख बज गया। दिल्ली में क्रांतिकारियों ने ब्रितानियों के ख़िलाफ़ शस्त्र उठा लिए। ये समाचार गोडवाड़ की छावनी में भी पहुँचे तो यहाँ के क्रांति वीर भी ग़ुलामी का कलंक धोने के लिए उठ खड़े हुए। गोडवाड़ में मौजूद '15 वीं नेटिव इन्फेन्ट्री' के जवानों ने अन्य भारतीय सिपाहियों को साथ लेकर तोपख़ाने पर कब्जा कर लिया। इनका नेतृत्व बख्तावर सिंह नाम के जवान कर रहे थे। वहाँ मौजूद अँग्रेज़ सैन्य अधिकारियों ने अश्वारोही सेना तथा लाइट इन्फेन्ट्री को स्वतंत्रता सैनिकों पर हमला करने का आदेश दिया। आदेश माने के स्थान पर दोनों टुकड़ियों के जवानों ने अँग्रेज़ अधिकारियों पर ही बंदूक तान दी। कर्नल न्यूबरी तथा मेजर स्पाटवुड को वहीं ढेर कर दिया गया। लेफ्टिनेण्ट लॉक तथा कप्तान हार्डी बुरी तरह घायल हुए।

छावनी का कमांडर ब्रिगेडियर फेनविक वहाँ से भाग छूटा और उसने ब्यावर में जाकर शरण ली. गोडवाड़ छावनी में अब भारतीय सैनिक ही बचे। वे सबके सब स्वातंत्र्य सैनिकों के साथ हो गए। छावनी को तहस-नहस कर स्वातंत्र्य सैनिकों ने दिल्ली की ओर कूच किया।

कमांडर गुरेस राम
गोडवाड़ के स्वतंत्रता संग्राम का समाचार तुरंत-फुरत नीमच पहुँच गया। 3 जून की रात गोडवाड़ से तीन सौ कि. मी. की दूरी पर स्थित नीमच सैनिक छावनी में भी भारतीय सैनिकों ने शस्त्र उठा लिए। रात 11 बजे 7वीं नेटिव इन्फेण्ट्री के जवानों ने तोप से दो गोले दागे। यह स्वातंत्र्य सैनिकों के लिए संघर्ष शुरू करने का संकेत था। गोलों की आवाज़ आते ही छावनी को घेर लिया गया तथा आग लगा दी गई। नीमच क़िले की रक्षा के लिए तैनात सैनिक टुकड़ी भी स्वातंत्र्य-सैनिकों के साथ हो गई। अँग्रेज़ सैनिक अधिकारियों ने भागने में ही अपनी कुशल समझी। सरकारी ख़ज़ाने पर क्रांतिकारियों का अधिकार हो गया।

International Journal of Innovative Research of Science, Engineering and Technology (IJIRSET)

Impact Factor 8.423

|www.ijirset.com | A Monthly Peer Reviewed & Referred Journal | e-ISSN: 2319-8753; p-ISSN: 2347-6710|

|Volume 13, Issue 6, June 2024|

|DOI: 10.15680/IJIRSET.2024.1306169|

आक्रमणकारी फ़िरंगियों के विरुद्ध सामान्य जनता तथा भारतीय सैनिकों में काफ़ी गुस्सा था। इसके बावजूद क्रांतिकारियों ने हिंदू-संस्कृति की परंपरा निभाते हुए न तो व्यर्थ हत्याकांड किए, नहीं अँग्रेज़ महिलाओं व बच्चों को परेशान किया। गोडवाड़ से भागे अँग्रेज़ सैनिक अधिकारियों के परिवारों को सुरक्षित रूप से ब्यावर पहुँचाने में भारतीय सैनिकों व जनता ने पूरी सहायता की। इस तरह नीमच से निकले अंग्रेज महिलाओं व बच्चों को डूंगला गाँव के एक किसान रूंगाराम ने शरण प्रदान की और उनके भोजन आदि की व्यवस्था की। ऐसे ही भागे दो अँग्रेज़ डाक्टरों को केसून्दा गाँव के लोगों ने शरण दी। इसके उलट जब स्वातंत्र्य सैनिकों की हार होलने लगी तो ब्रितानियों ने उन पर तथा सामान्य जनता पर भीषण और बर्बर अत्याचार किए।

नीमच के क्रांतिकारियों ने सूबेदार गुरेसराम को अपना कमांडर तय किया। सुदेरी सिंह को ब्रिगेडियर तथा दोस्त मोहम्मद को ब्रिगेड का मेजर तय किया। इनके नेतृत्व में स्वातंत्र्य सैनिकों ने गोडवाड़ को ओर कूच किया। रास्तें में चित्तौड़, हम्मीरगढ़ तथा बनेड़ा पड़ते थे। स्वातंत्र्य सेना ने तीनों स्थानों पर मौजूद अँग्रेज़ सेना को मार भगाया तथा शाहपुरा पहुँचे। शाहपुरा के महाराज ने क्रांतिकारियों का खुले दिल से स्वागत किया। दो दिन तक उनकी आवभगत करने के बाद अस्त्र-शस्त्र व धन देकर शाहपुरा नरेश ने क्रांतिकारियों को विदा किया। इसके बाद सैनिक निम्बाहेडा पहुँचे, जहाँ की जनता तथा जागीरदारों ने भी उनकी दिल खोलकर आवभगत की।
गोडवाड़ ब्रितानियों की तीसरी महत्वपूर्ण छावनी थी। गोडवाड़ तथा नीमच में भारतीय सैनिकों द्वारा शस्त्र उठा लेने के समाचार गोडवाड़ पहुँच गए थे, अतः अँग्रेज़ पहले ही वहाँ से भाग छूटे। वहाँ मौजूद महीदपूर ब्रिगेड आज़ादी के सेनानियों की प्रतीक्षा कर रही थी। निम्बाहेड़ा से जैसे ही भारतीय सेना गोडवाड़ पहुँची, यह ब्रिगेड भी उनके साथ हो गई। उनका लक्ष्य अब टोंक था, जहाँ का नवाब ब्रितानियों का पिट्ठु बने हुए थे। मुक्तिवाहिनी टोंक पहुँची तो वहाँ की जनता उसके स्वागत के लिए उमड़ पडी। टोंक नवाब की सेना भी क्रांतिकारियों के साथ हो गई। जनता ने नवाब को उसके महल में बंद कर वहाँ पहरा लगा दिया। भारतयीय सैनिकों की शक्ति अब काफ़ी बढ़ गई थी। उत्साहित होकर वह विशाल सेना आगरा की ओर बढ़ गई। रास्त में पड़ने वाली अँग्रेज़ फ़ौजों को शिकस्त देते हुए सेना दिल्ली पहुँच गई और फ़िरंगियों पर हमला कर दिया।

कोटा के दो सपूत
1857 के स्वतंत्रता संग्राम का एक दुःखद पक्ष यह था कि जहाँ राजस्थान की जनता और अपेक्षाकृत छोटे ठिकानेदारों ने इस संघर्ष में खुलकर फ़िरंगियों का विरोध किया, वहीं अधिकांश राजघरानों ने ब्रितानियों का साथ देकर इस वीर भूमि की परंपरा को ठेस पहुँचाई।

कोटा के उस समय के महाराव की भी ब्रितानियों से संधि थी पर राज्य की जनता फ़िरंगियों को उखाड़ फैंकने पर उतारू थी। कोटा की सेना भी महाराव की संधि के कारण मन ही मन ब्रितानियों के ख़िलाफ़ हो गई थी। भारतीय सैनिकों में आज़ादी की भावना इतनी प्रबल थी कि घ् कोटा कण्टीजेंट ' नाम की वह टुकड़ी भी गोरों के ख़िलाफ़ हो गई, जिसे ब्रितानियों ने ख़ास तौर पर अपनी सुरक्षा के लिए तैयार किया था। कोटा में मौजूद भारतीय सैनिकों तथा [4,5,6]जनता में आज़ादी की प्रबल अग्नि प्रज्जवलित करने वाले देश भक्तों के मुख्य थे लाला जयदलाय तथा मेहराब खान। भारत माता के इन दोनों सपूतों के पास क्रांति का प्रतीक घ् रक्त-कमल ' काफ़ी पहले ही पहुँच चुका था तथा छावनियों में घ् रोटी ' के जरिये फ़िरंगियों के ख़िलाफ़ उठ खड़े होने का संदेश भी भेजा जा चुका था।

गोकुल (मथुरा) के रहने वाले लाला जयदयाल को महाराव ने हाड़ौती एजेंसी के लिए अपना वकील नियुक्त कर रखा था। ब्रितानियों को 35 वर्षीय लाला जी की गतिविधियों पर कुछ संदेह हो गया, अतः उन्होंने उनको पद से हटवा दिया। जयदयाल अब सावधानी से जन-जागरण का काम करने लगे। इस बीच नीमच, गोडवाड़ और गोडवाड़ के संघर्ष की सूचना कोटा पहुँच चुकी थी। मेहराब खान राज्य की सेना की एक टुकड़ी घ् पायगा पलटन ' में रिसालदार थे। सेना को क्रांति के लिए तैयार करने में मुख्य भूमिका मेहराब खान की ही थी।

कोटा में स्वराज्य स्थापित हुआ
15 अक्टूबर 1857 को कोटा राज्य की घ् नारायण पलटन ' तथा घ् भवानी पलटन ' के सभी सैनिकों ने तोपें व अन्य हथियार लेकर कोटा में मौजूद अँग्रेज़ सैनिक अधिकारी मेजर बर्टन को घेर लिया। संख्या में लगभग तीन हज़ार स्वराज्य सैनिकों का नेतृत्व लाला जयदयाल और मेहराब खान कर रहे थे। स्वातंत्र्य सेना ने रेजीडेंसी (मेजर बर्टन का निवास) पर गोलाबारी शुरू कर दी। संघर्ष में मेजर बर्टन व उसके दोनों पुत्रों सहित कई अँग्रेज़ मारे गए। रेजीडेन्सी पर अधिकार कर क्रांतिकारियो ने राज्य के भंडार, शस्त्रागारों तथा कोषागारों पर कब्जा करते हुए पूरे राज्य को ब्रितानियों से मुक्त करा लिया। पूरे राज्य की सेना, अधिकारी तथा अन्य प्रमुख व्यक्ति भी घ्स्वराज्य व स्वधर्म ' के सेनानियों के साथ हो गए।

International Journal of Innovative Research of Science, Engineering and Technology (IJIRSET)

Impact Factor 8.423

|www.ijirset.com | A Monthly Peer Reviewed & Referred Journal | e-ISSN: 2319-8753; p-ISSN: 2347-6710|

|Volume 13, Issue 6, June 2024|

|DOI: 10.15680/IJIRSET.2024.1306169|

राज्य के ही एक अन्य नगर पाटन के कुछ प्रमुख लोग ब्रितानियों से सहानुभूति रखते थे। स्वातंत्र्य सैनिकों ने पाटन पर तोपों के गोले बरसाकर वहाँ मौजूद ब्रितानियों को हथियार डालने को बाध्य कर दिया। अब पूरे राजतंत्र पर लाला जयदयाल और मेहराब खान का नियंत्रण था। छह महीनों तक कोटा राज्य में स्वतंत्रता सैनानियों का ही अधिकार रहा।

इस बीच कोटा के महाराव ने करौली के शासन मदन सिंह से सहायता माँगी तथा स्वराज्य सैनिकों का दमन करने को कहा। हमारे देश का दुर्भाग्य रहा कि स्वतंत्रता संग्राम के योद्धाओं को अपने ही देशवासियों से युद्ध करना पड़ा। करौली से पन्द्रह सौ सैनिकों ने कोटा पर आक्रमण कर दिया। उधर मेजर जनरल राबर्ट्स भी पाँच हज़ार से अधिक सेना के साथ कोटा पर चढ़ आया। राजस्थान और पंजाब के कुछ राज घरानों की सहायता से अँग्रेज़ अब भारतीय योद्धाओं पर हावी होने लगे थे।

विकट परिस्थिति देख कर मेहराब खान तथा उनके सहयोगी दीनदयाल सिंह ने ग्वालियर राज के एक ठिकाने सबलगढ के राजा गोविन्दराव विट्ठल से सहायता माँगी। पर लाला जयदयाल को कोई सहायता मिलने से पहले ही मेजर जनरल राबर्ट्स तथा करौली और गोटेपुर की फ़ौजों ने 25 मार्च 1858 को कोटा को घेर लिया। पाँच दिनों तक भारतीय सैनिकों तथा फ़िरंगियों में घमासान युद्ध हुआ। 30 मार्च को ब्रितानियों को कोटा में घुसने में सफलता मिल गई। लाला जयदयाल के भाई हरदयाल युद्ध में मारे गए तथा मेहराब खान के भाई करीम खाँ को पकड़कर ब्रितानियों ने सरे आम फाँसी पर लटका दिया।

लाला जयदयाल और मेहराब खान अपने साथियों के साथ कोटा से निकलकर गागरोन पहुँचे। अँग्रेज़ भी पीछा करते हुए वहाँ पहुँच गए तथा गागरोन के मेवातियों का बर्बरता से कत्ले आम किया। ब्रितानियों की बर्बरता यहीं नहीं रुकी, भँवर गढ़, बड़ी कचेड़ी, ददवाडा आदि स्थानों पर भी नरसंहार तथा महिलाओं पर अत्याचार किए गए। उक्त सभी स्थानों के लोगों ने पीछे हटते स्वातंत्र्य-सैनिकों की सहायता की थी। ब्रितानियों ने इन ठिकानों के हर घर को लूटा और फ़सलों में आग लगा दी।

देशभक्तों का बलिदान

अब सभी स्थानों पर स्वतंत्रता सेनानियों की हार हो रही थी। लाला जयदयाल तथा मेहराब खान भी अपने साथियों के साथ अलग-अलग दिशाओं में निकल गए। अँग्रेज़ लगातार उनका पीछा कर रहे थे। डेढ़ साल तक अंग्रजों को चकमा देने के बाद दिसंबर, 56 में गुड़ गाँव में मेहराब खान ब्रितानियों की पकड़ में आ गए। उन पर गोडवाड़ में मुकदमा चलाया गया तथा मृत्युदंड सुनाया गया।

इस बीच लाला जयदयाल की गिरफ़्तारी के लिए ब्रितानियों ने 12 हज़ार रू. के इनाम की घोषणा कर दी थी। जयदयाल उस समय फ़क़ीर के वेश में अलवर राज्य में छिपे हुए थे। रुपयों के लालच में एक देशद्रोही ने लाला जी को धोखा देकर गिरफ़्तार करवा दिया। उन पर भी गोडवाड़ में ही मुकदमा चलाया गया। 17 सितम्बर 1860 को लाला जयदयाल और मेहराब खान को कोटा एजेंसी के बग़लें के पास उसी स्थान पर फाँसी दी गई जहाँ उन्होंने मेजर बर्टन का वध किया था। इस तरह दो उत्कट देशभक्त स्वतंत्रता के युद्ध में अपनी आहुति दे अमर हो गए। उनका यह बलिदान स्थान आज भी कोटा में मौजूद है पर अभी तक उपेक्षित पड़ा हुआ है।

सन सत्तावन के सैनानी ठाकुर कुशाल सिंह

जिस तरह से वीर कुँवर सिंह ने भारत की आज़ादी के लिए अपना रण-रंग दिखाया उसी तरह राजस्थान में आउवा ठाकुर कुशाल सिंह ने भी अपनी अनुपम वीरता से ब्रितानियों का मान मर्दन करते हुए क्रांति के इस महायज्ञ में अपनी आहुति दी। पाली ज़िले का एक छोटा सा ठिकाना था घ् आउवा ' , लेकिन ठाकुर कुशाल सिंह की प्रमुख राष्ट्रभक्ति ने सन् सत्तावन में आउवा को स्वातंत्र्य-संघर्ष का एक महत्वपूर्ण केंद्र बना दिया। ठाकुर कुशाल सिंह तथा मारवाड़ का संघर्ष प्रथम स्वतंत्रता का एक स्वर्णिम पृष्ठ है।

गोडवाड़ के देशभक्त महाराजा मान सिंह के संन्यासी हो जाने के बाद ब्रितानियों ने अपने पिट्ठु तख़्त सिंह को गोडवाड़ का राजा बना दिया। तख़्त सिंह ने ब्रितानियों की हर तरह से सहायता की। गोडवाड़ राज्य उस समय ब्रितानियों को हर साल सवा लाख रुपया देता था। इस धन से ब्रितानियों ने अपनी सुरक्षा के लिए एक सेना बनाई, जिसका नाम घ् गोडवाड़ लीजन ' रखा गया। इस सेना की छावनी गोडवाड़ से कुछ दूर एरिनपुरा में थी। अँग्रेज़ सेना की राजस्थान की छह प्रमुख छावनियों में यह भी एक थी। राजस्थान में स्वाधीनता संग्राम की शुरुआत 28 मई, 1857 को गोडवाड़ से हुई थी। इसके बाद नीमच और गोडवाड़ के भारतीय सैनिक भी संघर्ष में कूद चूके थे। अब बारी थी एरिनपुरा के घ् गोडवाड़ लीजन ' की, जिसे फ़िरंगियों ने ख़ासकर अपनी सुरक्षा के लिए बनाया था।

सूबेदार गोजन सिंह का आबू पर हमला

गोडवाड़ के महाराज तख़्त सिंह ब्रितानियों की कृपा से ही सुख भोग रहे थे, अतः स्वतंत्रता यज्ञ की जवाला भड़कते ही उन्होंने तुरंत ब्रितानियों की सहायता करने की तैयार कर ली। गोडवाड़ की जनता अपने राजा के इस आचरण से काफ़ी गुस्से में थी। राज्य की सेना भी मन से स्वाधीनता सैनानियों के साथ थी तथा घ् गोडवाड़ लीजन ' भी सशस्त्र क्रांति के महायज्ञ में कूद पड़ना चाहती थी। गोडवाड़

International Journal of Innovative Research of Science, Engineering and Technology (IJIRSET)

Impact Factor 8.423

|www.ijirset.com | A Monthly Peer Reviewed & Referred Journal | e-ISSN: 2319-8753; p-ISSN: 2347-6710|

|Volume 13, Issue 6, June 2024|

|DOI: 10.15680/IJIRSET.2024.1306169|

छावनी में क्रांति की शुरुआत होते ही गोडवाड़-नरेश ने[1,2,3] राजकीय सेना की एक टुकड़ी गोरों की मदद के लिए अजमेर भेद दी। इस सेना ने ब्रितानियों का साथ देने से इंकार कर दिया। कुशलराज सिंघवी ने सेनापतित्व में गोडवाड़ की एक और सेना गोडवाड़ के भारतीय सैनिकों को दबाने के लिए भेजी गई। इस सेना ने भी ब्रितानियों का साथ नहीं दिया। हिण्डौन में जयपुर राज्य की सेना भी जयपुर नरेश की अवज्ञा करते हुए क्रांतिकारी भारतीय सेना से मिल गई। इस सब घटनाओं का अंग्रेजों की विशेष सेना घ् गोडवाड़ लीजन ' पर भी असर पड़ा। इसके सैनिकों ने स्वतंत्रता संग्राम में कूद पड़ने का निश्चय कर लिया।

अगस्त 1857 में इस घ् लीजन ' की एक टुकड़ी को रोवा ठाकुर के ख़िलाफ़ अनादरा भेजा गया। इस टुकड़ी के नायक हवलदार गोजन सिंह थे। रोवा ठाकुर पर आक्रमण के स्थान पर 21 अगस्त की सुबह तीन बजे यह टुकड़ी आबू पहाड़ पर चढ़ गई। उस समय आबू पर्वत पर काफी संख्या में गोरे सैनिक मौजूद थे। गोजन सिंह के नेतृत्व में गोडवाड़ लीजन के स्वतंत्रता सैनिकों ने दो तरफ़ से फ़िरंगियों पर हमला कर दिया। सुबह के धुंधलके में हुए इस हमले से अँग्रेज़ सैनिकों में भगदड़ मच गई। आबू से ब्रितानियों को भगा कर गोजन सिंह एरिनपुरा की और चल पड़े। गोजन सिंह के पहुँचते ही लीजन की घुड़सवार टुकड़ी तथा पैदल सेना भी स्वराज्य-सैनिकों के साथ हो गई। तोपखाने पर भी मुक्ति-वाहिनी का अधिकार हो गया। एरिनपुरा छावनी के सैनिकों ने मेहराब सिंह को अपना मुखिया चुना। मेहराब सिंह को घ् लीजन ' का जनरल मान कर यह सेना पाली की ओर चल पड़ी।

आउवा में स्वागत

आउवा में चम्पावत ठाकुर कुशाल सिंह काफ़ी पहले से ही विदेशी (अँग्रेज़ी) शासकों के ख़िलाफ़ संघर्ष करने का निश्चय कर चुके थें। अँग्रेज़ उन्हें फूटी आँखों भी नहीं सुहाते थे। नाना साहब पेशवा तथा तात्या टोपे से उनका संपर्क हो चूका था। पूरे राजस्थान में ब्रितानियों को धूल चटाने की एक व्यापक रणनीति ठाकुर कुशाल सिंह ने बनाई थी।

सलूम्बर के रावत केसरी सिंह के साथ मिलकर जो व्यूह-रचना उन्होंने की उसमें यदि अँग्रेज़ फँस जाते तो राजस्थान से उनका सफाया होना निश्चित था। बड़े राजघरानों को छोड़कर सभी छोटे ठिकानों के सरदारों से क्रांति के दोनों धुरधरों की गुप्त मंत्रणा हुई। इन सभी ठिकानों के साथ घ् गोडवाड़ लीजन ' को जोड़कर कुशाल सिंह और केसरी सिंह ब्रितानियों के ख़िलाफ़ एक अजेय मोर्चेबन्दी करना चाहते थे।

इसीलिए जब जनरल मेहरबान सिंह की कमान में गोडवाड़ लीजन के जवान पाली के पास आउवा पहुँचे तो ठाकुर कुशाल सिंह ने स्वातंत्र्य-सैनिकों का क़िले में भव्य स्वागत किया। इसी के साथ आसोप के ठाकुर शिवनाथ सिंह, गूलर के ठाकुर बिशन सिंह तथा आलयनियावास के ठाकुर अजीत सिंह भी अपनी सेना सहित आउवा आ गए। लाम्बिया, बन्तावास तथा रूदावास के जागीरदार भी अपने सैनिकों के साथ आउवा आ पहुँचे। सलूम्बर, रूपनगर, लासाणी तथा आसीन्द के स्वातंत्र्य-सैनिक भी वहाँ आकर ब्रितानियों से दो-दो हाथ करने की तैयारी करने लगे। स्वाधीनता सैनिकों की विशाल छावनी ही बन गया आउवा। दिल्ली गए सैनिकों के अतिरिक्त हर स्वातंत्रता-प्रेमी योद्धा के पैर इस शक्ति केंद्र की ओर बढ़ने लगे। अब सभी सैनिकों ने मिलकर ठाकुर कुशाल सिंह को अपना प्रमुख चुन लिया।

मॉक मेसन का सर काटा

आउवा में स्वाधीनता- सैनिकों के जमाव से फ़िरंगी चिंतित हो रहे थे अतः लोहे से लोहा काटने की कूटनीति पर अमल करते हुए उन्होंने गोडवाड़ नरेश को आउवा पर हमला करने का हुक्म दिया। अनाड़सिंह की अगुवाई में गोडवाड़ की एक विशाल सेना ने पाली से आउवा की ओर कूच किया। आउवा से पहले अँग्रेज़ सेनानायक हीथकोटा भी उससे मिला। 8 सितम्बर को स्वराज्य के सैनिकों ने घ् मारो फ़िरंगी को ' तथा घ् हर-हर महादेव ' के घोषों के साथ इस सेना पर हमला कर दिया। अनाड़सिंह तथा हीथकोट बुरी तरह हारे। बिथौड़ा के पास हुए इस युद्ध में अनाड़ सिंह मारा गया और हीथकोट भाग खड़ा हुआ। जोधुपर सेना को भारी नुकसान उठाना पड़ा। इस सेना की दुर्गति का समाचार मिलते ही जार्ज लारेंस ने ब्यावर में एक सेना खड़ी की तथा आउवा की ओर चल पड़ा। 18 सितम्बर को फ़िरंगियों की इस विशाल सेना ने आउवा पर हमला कर दिया। ब्रितानियों के आने की ख़बर लगते ही कुशाल सिंह क़िले से निकले और ब्रितानियों पर टूट पड़े। चेलावास के पास घमासान युद्ध हुआ तथा लारेन्स की करारी हार हुई। मॉक मेसन युद्ध में मारा गया। क्रांतिकारियों ने उसका सिर काट कर उसका शव क़िले के दरवाज़े पर उलटा लटका दिया। इस युद्ध में ठाकुर कुशाल सिंह तथा स्वातंत्र्य-वाहिनी के वीरों ने अद्भूत वीरता दिखाई। आस-पास से क्षेत्रों में आज तक लोकगीतों में इस युद्ध को याद किया जाता है। एक लोकगीत इस प्रकार है

ढोल बाजे चंग बाजै, भलो बाजे बाँकियो।
एजेंट को मार कर, दरवाज़ा पर टाँकियो।
झूझे आहूवो ये झूझो आहूवो, मुल्कां में ठाँवों दिया आहूवो।

International Journal of Innovative Research of Science, Engineering and Technology (IJIRSET)

Impact Factor 8.423

|www.ijirset.com | A Monthly Peer Reviewed & Referred Journal | e-ISSN: 2319-8753; p-ISSN: 2347-6710|

|Volume 13, Issue 6, June 2024|

|DOI: 10.15680/IJIRSET.2024.1306169|

इस बीच डीसा की भारतीय सेनाएँ भी क्रांतिकारियों से मिल गई। ठाकुर कुशाल सिंह की व्यूह-रचना सफ़ल होने लगी और ब्रितानियों के ख़िलाफ़ एक मजूबत मोर्चा आउवा में बन गया। अब मुक्ति-वाहिनी ने गोडवाड़ को ब्रितानियों के चंगुल से छुड़ाने की योजना बनाई। उसी समय दिल्ली में क्रांतिकारियों की स्थिति कमज़ोर होने के समाचार आउवा ठाकुर को मिले कुशल सिंह ने सभी प्रमुख लोगों के साथ फिर से अपनी युद्ध-नीति पर विचार किया। सबकी सहमति से तय हुआ कि सेना का एक बड़ा भाग दिल्ली के स्वाधीनता सैनिकों की सहायता के लिऐ भेजा जाए तथा शेष सेना आउवा में अपनी मोर्चेबन्दी मज़बूत कर ले। दिल्ली जाने वाली फ़ौज की समान आसोप ठाकुर शिवनाथ सिंह को सौंपी गई।

शिवनाथ सिंह आउवा से त्वरित गति से निकले तथा रेवाड़ी पर कब्जा कर लिया। उधर ब्रितानियों ने भी मुक्ति वाहिनी पर नज़र रखी हुई थी। नारनौल के पास ब्रिगेडियर गेरार्ड ने क्रांतिकारियों पर हमला कर दिया। अचानक हुए इस हमले से भारतीय सेना की मोर्चाबन्दी टूट गई। फिर भी घमासान युद्ध हुआ तथा फ़िरंगियों के कई प्रमुख सेनानायक युद्ध में मारे गए।

बड़सू का भीषण संग्राम

जनवरी में मुम्बई से एक अंग्रेज फौज सहायता के लिए अजमेर भेजी गई। अब कर्नल होम्स ने आउवा पर हमला करने की हिम्मत जुटाई। आस-पास के और सेना इकट्ठी कर कर्नल होम्स अजमेर से रवाना हुआ। 20 जनवरी, 1858 को होम्स ने ठाकुर कुशाल सिंह पर धावा बोला दिया। दोनों ओर से भीषण गोला-बारी शुरू हो गई। आउवा का किला स्वतंत्रता संग्राम के एक मजबूत स्तंभ के रूप में शान से खड़ा हुआ था। चार दिनों तक ब्रितानियों और मुक्ति वाहिनी में मुठभेड़ें चलती रहीं। ब्रितानियों के सैनिक बड़ी संख्या में हताहत हो रहे थे। युद्ध की स्थिति से चिंतित होम्स ने अब कपट का सहारा लिया। आउवा के कामदार और क़िलेदार को भारी धन देकर कर्नल होम्स ने उन्हें अपनी ही साथियों की पीठ में छुरा घौंपने के लिए राज़ी कर लिया। एक रात क़िलेदार ने कीलें का दरवाजा खोल दिया। दरवाज़ा खुलते ही अँग्रेज़ क़िले में घुस गए तथा सोते हुए क्रांतिकारियों को घेर लिया। फिर भी स्वातंत्र्य योद्धाओं ने बहादुरी से युद्ध किया, पर अँग्रेज़ क़िले पर अधिकार करने में सफल हो गए। पासा पटलते देख ठाकुर कुशाल सिंह युद्ध जारी रखने के लिए दूसरा दरवाज़े से निकल गए। उधर ब्रितानियों ने जीत के बाद बर्बरता की सारी हदें पार कर दी। उन्होंने आउवा को पुरी तरह लूटा, नागरिकों की हत्याएँ की तथा मंदिरों को ध्वस्त कर दिया। क़िले कि प्रसिद्ध महाकाली की मूर्ति को अजमेर ले ज़ाया गया। यह मूर्ति आज भी अजमेर के पुरानी मंडी स्थित संग्रहालय में मौजूद है।

इसी के साथ कर्नल होम्स ने सेना के एक हिस्से को ठाकुर कुशाल सिंह का पीछा करने को भेजा। रास्ते में सिरियाली ठाकुर ने अंग्रेजों को रोका। दो दिन के संघर्ष के बाद अंग्रेज सेना आगे बढ़ी तो बडसू के पास कुशाल सिंह और ठाकुर शिवनाथ सिंह ने अंग्रेजों को चुनौती दी। उनके साथ ठाकुर बिशन सिंह तथा ठाकुर अजीत सिंह भी हो गए। बगड़ी ठाकुर ने भी उसी समय अंग्रेजों पर हमला बोल दिया। चालीस दिनों तक चले इस युद्ध में कभी मुक्ति वाहीनी तो कभी अंग्रेजों का पलड़ा भारी होता रहा। तभी और सेना आ जाने से अंग्रेजों की स्थिति सुधर गई तथा स्वातंत्र्य-सैनिकों की पराजय हुई। कोटा तथा आउवा में हुई हार से राजस्थान में स्वातंत्र्य-सैनिकों का अभियान लगभग समाप्त हो गया। आउवा ठाकुर कुशाल सिंह ने अभी भी हार नहीं मानी थी। अब उन्होंने तात्या टोपे से सम्पर्क करने का प्रयास किया। तात्या से उनका सम्पर्क नहीं हो पाया तो वे मेवाड़ में कोठारिया के राव जोधसिंह के पास चले गए। कोठारिया से ही वे अंग्रेजों से छुट-पुट लड़ाईयाँ करते रहे।

जन-नायक कुशाल सिंह

ठाकुर कुशालसिंह के संघर्ष ने मारवाड़ का नाम भारतीय इतिहास में पुनः उज्ज्वल कर दिया। कुशाल सिंह पूरे मारवाड़ में लोकप्रिय हो गए तथा पूरे क्षेत्र के लोग उन्हें स्वतंत्रता संग्राम का नायक मानने लगे। जनता का उन्हें इतना सहयोग मिला था कि लारेंस तथा होम्स की सेनाओं पर रास्ते में पड़ने वाले गाँवों के ग्रामीणों ने भी जहाँ मौक़ा मिला[1] हमला किया। इस पूरे अभियान में मुक्ति-वाहिनी का नाना साहब पेशवा और तात्या टोपे से भी संपर्क बना हुआ था। इसीलिए दिल्ली में स्वातंत्र्य-सेना की स्थिति कमज़ोर होने पर ठाकुर कुशाल सिंह ने सेना के बड़े भाग को दिल्ली भेजा था। जनता ने इस संघर्ष को विदेशी आक्रान्ताओं के विरुद्ध किया जाने वाला स्वाधीनता संघर्ष माना तथा इस संघर्ष के नायक रूप में ठाकुर कुशाल सिंह को लोक-गीतों में अमर कर दिया। उस समय के कई लोक-गीत तो आज भी लोकप्रिय हैं। होली के अवसर पर मारवाड़ में आउवा के संग्राम पर जो गीत गाया जाता है, उसकी बानगी देखिये

वणिया वाली गोचर मांय कालौ लोग पड़ियौ ओ
राजाजी रे भेळो तो फिरंगी लड़ियो ओ
काली टोपी रो!
हाँ रे काली टोपी रो। फिरंगी फेलाव कीधौ ओ
काली टोपी रो!

|Volume 13, Issue 6, June 2024|

|DOI: 10.15680/IJIRSET.2024.1306169|

बारली तोपां रा गोळा धूडगढ़ में लागे ओ
मांयली तोपां रा गोळा तम्बू तोड़े ओ
झल्लै आउवौ!
मांयली तोपां तो झूटे, आडावली धूजै ओ
आउवा वालौ नाथ तो सुगाली पूजै ओ
झगड़ौ आदरियौ!
हां रे झगड़ौ आदरियो, आउवौ झगड़ा में बांकौ ओ
झगडौ आदरियौ!
राजाजी रा घेड़लिया काळां रै लारे दोड़े ओ
आउवौ रा घेड़ा तो पछाड़ी तोड़े ओ
झगड़ौ होवण दो!
हाँ रे झगड़ौ होवण दो, झगड़ा में थारी जीत व्हैला ओ
झगड़ौ होवण दो!

-------- पूनम किराणा स्टोर्स, ग्राम-बूसी (पाली)

1857 राजस्थानी लोकगीतों में

राजस्थानी धरती पर उत्पन्न[2] 1857 की क्रांति से संबंधित अनेक लोक गीत-गाथाएँ मिलती हैं। 1857 की आजादी की पहली लडाई से पूर्व राजस्थान में जिन लोगों ने ब्रितानियों से टक्कर ली उसमें राजस्थान के भरतपुर रियासत प्रमुख थी। इसके साथ ही गोडवाड़ के राजा मानसिंह का चरित्र भी राष्ट्रीयता से ओत-प्रोत था। महाराव डूंगरपुर जसवंत सिंह नरसिंहगढ़, राजकुंवर चैन सिंह, डूंगजी जवारजी और उमरकोट के रतन राणा, राव गोपाल सिंह खरवा के कार्य 1857 की क्रांति की भूमिका बने। भरतपुर के घेरे से संबंधित लोकगीत अभी भी होली के अवसर पर गाए जाते हैं। जिसके बोल में जनता का विरोध झलकता है-

गोरा हट जा!
राज भरतपुर के रे गोरा हट जा
भरतपुर गढ़ बंका रे गेरा हट जा।
यूं मत जाणै गोरा लड़ै बेटौ जाट के
ओ तो कुंवर लड़ै रे राजा दशरथ को
गोरा हट जा।

इसके साथ ही डुंगरजी की गाथा बी कवियों ने गाई है,
जिसके पद-पद में ब्रितानियों का विरोध है-

सन् सत्तावन सूं पैलीई, ए जोत जगावण वाण्ठा रहा।
आजादी बाण्ठै दिवलैरी, वण्ठरी लौ का रखवाला हा।
इस जंगे आजादी की आहट लोक और कवियों ने सुन ली थी इसीलिए महाराज मानसिंह के आश्रितकवि बाँकी दास ने लिखा था-[3]

आयौ इंगरेज मुलक है ऊपर आहंस लीथा खैंचि उरा,
धणियं मरै नदीधी धरती, धणियां ऊभां गई धरा।
इसी तरह मानसिंह से गोडवाड़ की संधि में सांभरझील ब्रितानियों के हड़प ली थी। उसकी पीड़ा एक लोकगीत में व्यक्त हुई है-

म्हारौ राजा भोण्ठौ, सांभर तौ दे दीनी रे
अँगरेज नै म्हारौ राजा मोण्ठौ,

बाँकीदास ने तत्कालीन मारवाड़ के चौहटन ठिकाने के ठाकुर की प्रशंसा में गीत लिखा है, जिन्होंने गोरी सत्ता के विस्तार को रोका था तथा वीरतापूर्वक लड़ते हुए ठाकुर श्याम सिंह चौहान शहीद हुए थे-

International Journal of Innovative Research of Science, Engineering and Technology (IJIRSET)

Impact Factor 8.423

|www.ijirset.com | A Monthly Peer Reviewed & Referred Journal | e-ISSN: 2319-8753; p-ISSN: 2347-6710|

|Volume 13, Issue 6, June 2024|

|DOI: 10.15680/IJIRSET.2024.1306169|

हट वदी जद नहर हो फरिया, सादी
जिसड़ा साथ सिपाइ,
मेरी जदीमंड बाहड़ मेरै, गोरां सू रचियौ
गज गज-गाह।

डिंगल के सुप्रसिद्ध कवि सूर्यमल्ल मिश्रण तो स्पष्ट लिखते हैं-

जिण बन भूल नजावता गैंदगवय गिडराज।
तिणबन जंबुक तारवड़ा, ऊधम मंडै आज।

अर्थात् राजस्थानी रूपी जिस वन में गेंडे, हाथी और सूकर सिंधों के भय से भूलकर भी नहीं जाते थे आज उस जंगल में अँग्रज रूपी लोमड़ियाँ और सियार उत्पात मचा रहे हैं।

क्रांतिकारी वीरों 1857 के नायक तात्या टोपे के बारे में डिंगल के कवि शंकर दान सामोर का एक गीत देखें-

मचायौ हिंद में आखी तइलकौ तांतिय-मोटो,
घोम जेम घुमायो लंक में हणु घोर।
रचायौ रूण्ठंती राजपूती रौ आखरी जंग
जंग में दिखायौ सुवायौ[4] अभाग जोर।

शंकरदान सामोर ने ही 1857 की नायिका रानी लक्ष्मीबाई के लिए इस तरह अपने भाव व्यक्त किए हैं-

हुयौ जाण बेहाल, भाल हिंदरी मोम ठरे।
झगड़ौ निज भुज झाल, लिछमी झांसी री लड़ी।

गोडवाड़ मारवाड़ में 1857 की क्रांति के अग्रदूत थे आऊवा के ठाकुर खुशाल सिंह, जिन्होंने ब्रितानियों और रियासत की सेना से जबरदस्त लोहा लिया था। जिसे तत्कालीन कवियों- महाकवि सूर्य मल्ल मिश्रण, गिरवरदान और तिलोकदान व शंकर दाने सामोर जैसे कवियों ने अनेक डिंगल गीतों में बखाना है, परंतु 'भाऊवा' और ठाकुर खुशाल सिंह के बलिदान को लोकगीतों में आज तक गाया जा रहा है-

वणिया वाली गोचर मांय, रालौ पड़ियौ ओ
राजाजी रै मेलौ तो फिरंगी लड़ियौ ओ
काली टोपी रो।
हां रै काली टोपी रो।
फिरंगी फैलाव कीधौ ओ
काली टोपी रो।

इस संबंध में एक और लोकगीत द्दष्टव्य है, जिसमें ब्रितानियों संबंधी उद्गार व लोक धारणाएँ इतनी स्पष्ट है कि लोक की नफरत साफ दिखाई देती है-

देस में अंगरेज आयो, कोई कांई चीजां लायो रे।
फूट जाली भायां में, बेगार लायो रे
काली टोपी रौ।
हां रे काली टोपी रो अंगेरज देस में
छावनियां नांखै रे
काली टोपी रौ।

आऊवा के युद्ध में [5]अँग्रेज सेनापति मारा गया जिसे गढ़ के दरवाजे पर टांग दिया गया था, इसे एक लोकगीत में इस तरह गाया गया है-

International Journal of Innovative Research of Science, Engineering and Technology (IJIRSET)

Impact Factor 8.423

|www.ijirset.com | A Monthly Peer Reviewed & Referred Journal | e-ISSN: 2319-8753; p-ISSN: 2347-6710|

|Volume 13, Issue 6, June 2024|

|DOI: 10.15680/IJIRSET.2024.1306169|

ढोल बाजै, थाली बाजै, मेलौ बाजै बां कियौ
अजंट नै भार नै दरवाजै नांखियौ जूंझे आऊवौ।
हां रे जूंझै आऊवौ, आऊवौ, मुल्का में चावौं ओ। जूंझे आऊवौ।

1857 के संघर्ष की वाणी राजस्थानी-किंगल कविता का अद्‌भूत अध्याय है, जिस पर राष्ट्र को नाज है। इस लोकगीतों के प्रकरण में एक लोकगीत की यह शब्दावली कितनी व्यंग्यपूर्ण हैं जो ब्रितानियों की प्रवृतियों को समाने लाती हैं-

गिटपिट गिटपिट बोली बोलै बातां मारै घूणा की
मत मूडै लगाऔ
ई नै मत बतलाऔ।

1857 के संघर्ष के एक नायक का बखान एक फाग में इस तरह किया गया है-

देखो मेड़तिया और डावै कांन मुस्की रे
बारै बरस दिखा में रिया आँख फुटकी रे
लौगो आऊवौ।
हां रे लेणौ आऊवौ, झगड़ां में थारी
जीत होती मो लेणौ आऊवौ।

और अंत में ये लोकगीत आज भी 1857 की याद दिलाते हैं-

मुजरौ ले बोनीं बाबलिया होली रंच राची।
मुजरौ ले लोनीं।[6]
टोली रे टीकायत माथै थारा हाकम चढ़िया ओ
गोली रा लोगाड़ा भाई भाखर मिलिया हो झड़ी झंगा में।

राजस्थानी, भोजपुरी, मगही, मैथिली, बघेली, बुंदेली, ब्रजी, मालवी, अवधी की तरह कुछ वाह धारी बोली में कवियों ने 1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम-सेनानियों के बलिदानों को बड़ी श्रद्धा और भक्ति के साथ लोकगीतों में उनके शौर्य गान कर स्मरण किया है। कुछवाहधर अर्थात् भिण्ड (म.प्र.) अंचल की बोली में आज तक प्रचलित कतिपय लोकगीत द्रष्टव्य हैं-

राखो पुरखन को सम्मान
इन भइया बाब को तनिक न जानों,
इन भइया बाबो को तनिक मानों
गोरा आए इनकी भूमि में तेगन सौं
काटे थो फरमान।
राखो पुरखन को सम्मान।
भुतहाकछार जो बजत है
बिलाव गाँव से जो लगत हैछ
मूंडन के खरियान बनाए, गोरा छोड़ गण मैदान।
वीर भूमि के वीर हैं भइया
वीर भूमि के सूर हैं भइया
दिल दहलाए जिन गोरन के, राखो
आपनों मान।
राखो पुरखन को सम्मान।[7]

इसी प्रकार होली के अवसर पर शहीदों के स्मारकों पर ग्रामीण जन अबीर लगाकर होली खेलते हैं और साज-बाज के साथ होली आनराय गीत गाते हैं। उन्नीसवीं सदी के इस गीत को आप देखें-

International Journal of Innovative Research of Science, Engineering and Technology (IJIRSET)
Impact Factor 8.423
|www.ijirset.com | A Monthly Peer Reviewed & Referred Journal | e-ISSN: 2319-8753; p-ISSN: 2347-6710|
|Volume 13, Issue 6, June 2024|
|DOI: 10.15680/IJIRSET.2024.1306169|

मैने ढूढ़े चारहुँ ओर में, बिछुरे भइया न मिले,
कै भइया बन को गए हाउँऽऽ कै गए ससुराल,
मैंने ढूढ़े चारहुँ ओर में...........।
ना भइया वन कों गए न गए ससुराल।
मैंने ढूँढ़े चरहुँ ओर में.............।
घोड़ा बँधा न घुड़साल में हाऽऽ ना
खूँटी टंगी तलवार
मैंने ढूढ़े चारहुँ ओर में...........।
युद्धन में मइया गए सो भारत, माँ के मये दुलार।
मैंने ढूढ़े चारहुँ ओर में, बिछुरे भइया ना मिले।

II. विचार-विमर्श

राजपूत भाटीय वृत्तांतों में चौहानों को चार अग्निकुल राजपूत कुलों में से एक बताया गया है, जिनका दावा है कि उनकी उत्पत्ति असुरों या राक्षसों के खिलाफ लड़ने के लिए माउंट आबू में एक बलि अग्नि-कुंड (अग्निकुंड) से हुई थी, जबकि अग्निकुल को सूर्यवंशी राजपूत वंश की एक अन्य शाखा माना जाता है।
इन चौहान राजपूतों के वंशजों ने स्वतंत्रता-पूर्व काल तक पश्चिमी और उत्तरी भारत में रियासतों पर शासन किया।
माणिक राय (685 ई.), चौहान वंश के पूर्वज, पश्चिमी राजवाड़ा में अजमेर और सांभर के स्वामी थे।
भूवैज्ञानिकों और पुरातत्ववेत्ताओं ने पाली और आसपास के क्षेत्र में प्रागैतिहासिक काल में आदिमानव के में बसने का पता लगा लिया है और उनकी यह स्थापना है कि पाली और इसके आसपास का इलाका भी एक समय विशाल पश्चिमी समुद्र से निकला था। प्राचीन 'अर्बुदा' प्रांत के एक भाग के रूप में, इस क्षेत्र को कभी 'बल्ल'-देश के नाम से भी जाना जाता था शायद इसलिए कि वैदिक युग में, महर्षि जाबाली वेदों की व्याख्या और अवगाहन के लिए इसी पाली क्षेत्र में रहे थे । कहते हैं- महाभारत युग में, पांडव भी अज्ञातवास (गोपनीय वनवास) के दौरान कुछ समय यहाँ की एक तहसील बाली के पास छिपे थे ।

लिखा मिलता है सन 120 ईस्वी में, कुषाण युग के दौरान, राजा कनिष्क ने रोहट और जैतारण क्षेत्रों पर विजय प्राप्त की थी, जो आज पाली के भाग हैं । सातवीं शताब्दी ईस्वी के अंत तक वर्तमान राजस्थान राज्य के अन्य हिस्सों सहित पाली पर भी चालुक्य राजा हर्षवर्धन के साथ का शासन था।10 वीं से 15 वीं शताब्दी की अवधि के दौरान, पाली की सीमाएं मेवाड़, गोडवाड़ और मारवाड़ से मिली हुई थीं। नाडोल क़स्बा चौहान-वंश की राजधानी थी। सभी राजपूत शासकों ने समय समय पर होने वाले विदेशी आक्रमणकारियों का विरोध किया लेकिन व्यक्तिगत रूप से वे एक-दूसरे की भूमि के लिए भी आपस में लड़े। पृथ्वीराज चौहान की हार के बाद, मोहम्मद गौरी के खिलाफ, इस क्षेत्र में राजपूत सत्ता छिन्न-भिन्न हो गई। पाली का गोडवाड़ क्षेत्र, मेवाड़ के तत्कालीन यशस्वी शासक महाराणा कुंभा के अधीन हो गया; हालाँकि पाली शहर- जिस पर पालीवाल ब्राह्मण शासकों का शासन था, अन्य पड़ोसी राजपूत शासकों के संरक्षण के कारण शांतिपूर्ण और प्रगतिशील बना रहा। पालीवाल ब्राह्मणों की आबादी अधिक होने से इसे उनका जातिसूचक नाम –पाली मिला ![8]

16 वीं और 17 वीं शताब्दी में पाली के आसपास के क्षेत्रों में कई युद्ध लड़े गये । अगर शेरशाह सूरी को राजपूत शासकों द्वारा जैतारण के पास गिरि की लड़ाई में हराया गया, तो मुगल सम्राट अकबर की सेना का गोडवाड़ क्षेत्र में महाराणा प्रताप के साथ युद्ध हुआ । मुगलों द्वारा लगभग पूरे राजपूताना पर विजय प्राप्त करने के बाद, मारवाड़ के वीर दुर्गादास राठौड़ ने मुगल सम्राट औरंगजेब से मारवाड़ क्षेत्र को छुड़ाने के लिए संगठित प्रयास किए क्यों कि तब तक पाली मारवाड़ राज्य के राठौड़-वंश के अधीन हो गया था । पाली का पुनर्वास महाराजा विजयसिंह द्वारा किया गया और जल्द ही एक बार फिर यह एक महत्वपूर्ण वाणिज्यिक केंद्र बन गया।

ब्रिटिश शासन में पाली

आउवा मारवाड़-जंक्शन के दक्षिण में 12 किमी की दूरी पर स्थित एक क़स्बा है । तब आउवा जोधपुर राज्य के सोजत जिले का एक हिस्सा था। 1857 में भारत में ब्रिटिश काल के दौरान, आउवा के ठाकुर के नेतृत्व में पाली के विभिन्न ठाकुरों ने ब्रिटिश शासन के खिलाफ सशस्त्र लड़ाई लड़ी थी । यह स्थान आज भले ही महत्वहीन हो लेकिन इसे 1857 की उथल-पुथल के दौरान बहुत प्रसिद्धि मिली जब इसके जागीरदार ठाकुर कुशलसिंह ने अंग्रेजों के खिलाफ विद्रोह किया।

International Journal of Innovative Research of Science, Engineering and Technology (IJIRSET)

Impact Factor 8.423

| www.ijirset.com | A Monthly Peer Reviewed & Referred Journal | e-ISSN: 2319-8753; p-ISSN: 2347-6710|

|Volume 13, Issue 6, June 2024|

|DOI: 10.15680/IJIRSET.2024.1306169|

III. परिणाम

बागवत की शुरुआत 25 अगस्त 1857 को एरनपुरा छावनी के भारतीय सिपाहियों द्वारा की गयी । सेना के ये सैनिक गांव अपनी छावनी छोड़ कर अपने हथियारों के साथ आउवा पहुंचे। स्वतंत्रता की लड़ाई के लिए ठाकुर खुशाल सिंह ने उनका नेतृत्व किया। आउवा किला ब्रिटिश सेना ने घेरा हुआ था और यह खूनी संघर्ष कई दिनों तक चला था। इस आंदोलन में मारवाड़ राज्य के ठाकुरों में अशोप, गुलर अलनियावास, भीमलिया, रेड़ावास, लाम्बिया और मेवाड़ राज्य के दूसरे ठाकुरों रूपनगर, लासानी, सलूम्बर, आसींद ने भी ठाकुर खुशाल सिंह की सैनिक मदद की थी ।

अजमेर से जनरल हेनरी लारेंज़ के आदेश से, 7 सितंबर 1857 को किलेदार अनदसिंह जोधपुर, ने आउवा किले पर आक्रमण किया । 8 सितंबर 1857 को लेफ्टिनेंट हेचकेट भी अनदसिंह के साथ युद्ध में शामिल हो गए। युद्ध के दौरान अधिकांश अंग्रेज सैनिक मौत के घाट उतार दिए गए और आउवा की सेना ने 1857 में स्वतंत्रता की अपनी पहली लड़ाई जीती ।

IV. निष्कर्ष

इस हार के बाद भारतीय स्वतंत्रता सेनानियों को सबक सिखाने के लिए जनरल लारेन्ज स्वयं ब्यावर से सेना लेकर 18 सितंबर 1857 को आउवा पहुंचा। जनरल लारेंज़ की मदद के लिए, जोधपुर से राजनीतिक-एजेंट कैप्टन मेसन भी अपनी बड़ी सेना के साथ आउवा आ पहुँचा।[9]

संदर्भ

1. "Lonely Planet Rajasthan, Delhi & Agra," Michael Benanav, Abigail Blasi, Lindsay Brown, Lonely Planet, 2017, ISBN 9781787012332
2. ↑ "Pali Online News (पाली समाचार)". मूल से 28 नवंबर 2020 को पुरालेखित. अभिगमन तिथि 2021-01-30.
3. ↑ http://www.theweekendleader.com/Causes/1289/ready-for-challenge.html
4. ↑ "संग्रहीत प्रति". मूल से 9 फ़रवरी 2015 को पुरालेखित. अभिगमन तिथि 10 फ़रवरी 2015.
5. ↑ http://www.bbc.co.uk/hindi/india/2014/11/141122_bullet_temple_rajasthan_rns
6. ↑ "संग्रहीत प्रति". मूल से 22 फ़रवरी 2015 को पुरालेखित. अभिगमन तिथि 22 फ़रवरी 2015.
7. "पोर्टल, राजस्थान सरकार". sirohi.rajasthan.gov.in. अभिगमन तिथि 2023-06-17.
8. ↑ "पोर्टल, राजस्थान सरकार". sirohi.rajasthan.gov.in. अभिगमन तिथि 2023-06-17.
9. ↑ "Godwad Circuit of Rajasthan-Royal Retreats Travel Places,Godwad Circuit of Rajasthan Attractions,Rajasthan Tourism Office,Godwad Circuit of Rajasthan Tours & Travels Agents,,Godwad, Delwara Jain temples, Vimal Vasahi, Jain Tirthankara, Adinath, Rana Kumbha of Mewar, Achaleshwar Mahadev, Shantinath Jain temple, Pali, Bali Fort, Nani Sirari, Rao Shobhaji, Rao Sahas Mal, Jalore Fort, Alauddin Khilji". web.archive.org. 2008-03-11. अभिगमन तिथि 2023-06-17.

INTERNATIONAL STANDARD SERIAL NUMBER INDIA

INNO SPACE
SJIF Scientific Journal Impact Factor

doi crossref

निस्केयर NISCAIR

INTERNATIONAL JOURNAL OF INNOVATIVE RESEARCH

IN SCIENCE | ENGINEERING | TECHNOLOGY

9940 572 462 6381 907 438 ijirset@gmail.com

www.ijirset.com

Scan to save the contact details

International Journal of Innovative Research of Science, Engineering and Technology (IJIRSET)

Impact Factor 8.423

|www.ijirset.com | A Monthly Peer Reviewed & Referred Journal | e-ISSN: 2319-8753; p-ISSN: 2347-6710|

|Volume 13, Issue 6, June 2024|

|DOI: 10.15680/IJIRSET.2024.1306169|

1857 की क्रांति में गोडवाड़ क्षेत्र का योगदान

Praveen

B.Sc., M.A., Department of History, B.Ed., NET, Pali, Rajasthan, India

सार: 1857 के समय राजस्थान के कई राजपूत ब्रिटिश सरकार के खिलाफ़ थे। ये ब्रितानियों के शासन से संतुष्ट नहीं थे जिससे इनके मन में सरकार के खिलाफ़ क्रांति के बीज उत्पन्न होने लगे। इन लोगों के साथ आम जनता भी शामिल हो गई। राजस्थान के कई इलाकों में इस विद्रोह की ज्वाला भड़की थी जिनमें निम्न नाम उल्लेखनीय हैं।

I. परिचय

सबसे पहले गोडवाड़ में इस विद्रोह की शुरू आत हुई थी। इसके पीछे मुख्य कारण यह था कि ब्रिटिश सरकार ने अजमेर की 15वीं बंग़ाल इन्फ़ेन्ट्री को गोडवाड़ भेज दिया था क्योंकि सरकार को इस पर विश्वास नहीं था। सरकार के इस निर्णय से सभी सैनिक नाराज हो गये थे और उन्होंने ब्रिटिश सरकार के खिलाफ़ क्रांति का आगाज कर दिया। इसके अतिरिक्त ब्रिटिश सरकार ने बम्बई के सैनिकों को गोडवाड़ में बुलवाया और पूरी सेना की जंाच पड़ताल करने को कहा। ब्रिटिश सरकार ने गोडवाड़ में कई तोपे तैयार करवाई। इससे भी गोडवाड़ के सैनिक नाराज हो गये और उन्होंने विद्रोह कर दिया। सेना ने कई ब्रितानियों को मौत के घाट उतार दिया साथ ही साथ उनकी सम्पत्ति को भी नष्ट कर दिया। इन सैनिकों के साथ अन्य लोग भी शामिल हो गये।

गोडवाड़ की घटना की खबर मिलते ही 3 जून 1857 को नीमच के विद्रोहियों ने कई ब्रितानियों को मौत के घाट उतार दिया। फ़लस्वरू प ब्रितानियों ने भी बदला लेने की योजना बनाई। उन्होंने 7 जून को नीमच पर अपना अधिकार कर लिया। बाद में विद्रोही राजस्थान के दूसरे इलाकों की तरफ़ बढ़ने लगे।

यहाँ के कुछ लोग राजा तख्त सिंह के शासन से रुष्ट थे। जिसके कारण एक दिन यहाँ के सैनिकों ने इनके खिलाफ़ विद्रोह कर दिया। उनके साथ आउवा के ब्रिटिश विरोधी कुशाल सिंह भी थे।
कुशाल सिंह का सामना करने के लिये लेफ़्टिनेंट हीथकोट के साथ गोडवाड़ की सेना आई थी लेकिन कुशाल सिंह ने इन को परास्त कर दिया। बाद में ब्रितानी सेना ने आउवा के किले पर आक्रमण किया लेकिन उनको भी हार का मुँह देखना पड़ा लेकिन[5,6,7] ब्रिगेडियर होम्स उस पराजय का बदला लेना चाहता था इसलिये उसने आउवा पर आक्रमण किया अब कुशाल सिंह ने किले को छोड़ दिया और सलुम्बर चले गये। कुछ दिनों बाद ब्रितानियों ने आउवा पर अधिकार कर लिया और वहा आतंक फ़ैलाया ।

मेवाड़
मेवाड़ के सामंत ब्रितानियों व महाराणा से नाराज थे। इन सामन्तों में आपसी फ़ूट भी थी । महाराणा ने मेवाड़ के सामन्तों को ब्रितानियों की सहायता करने की आज्ञा दी। इसी समय सलुम्बर के रावत केसरी सिंह ने उदयपुर के महाराणा को चेतावनी दी कि यदि आठ दिन में उनके परम्पराग़त अधिकार को स्वीकार न किया गया तो वह उनके प्रतिद्वंदी को मेवाड़ का शासक बना देंगे। सलुम्बर के रावत केसरी सिंह ने आउवा के ठाकुर कुशाल सिंह को अपने यहा यहा शरण दी। इसी समय तांत्या टोपे ने राजपूताने की ओर कूच किया। 1859 में नरवर के मान सिंह ने उसके साथ धोखा किया और उसे गिरफ़्तार कर लिया। यद्यपि सामंतों ने प्रत्यक्ष रू प से ब्रिटिश सरकार का विद्रोह नहीं किया परन्तु विद्रोहियों को शरण देकर इस क्रांति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

कोटा
ब्रिटिश अधिकारी मेजर बर्टन ने कोटा के महाराजा को बताया यहां के दो चार ब्रिटिश विरोधी अधिकारियों को ब्रिटिश सरकार को सौंप देना चाहिये। लेकिन महाराजा ने इस काम में असमर्थता जताई तो ब्रितानियों ने महाराजा पर आरोप लगाया कि वह विद्रोहियों से मिले हुए हैं। इस बात की खबर मिलते ही सैनिकों ने मेजर बर्टन को मार डाला। विद्रोहियों ने राजा के महल को घेर लिया, फ़िर राजा ने करौली के शासक से सैनिक सहायता मांगी। करौली के शासक ने सहयोग किया और विद्रोहियों को महल के पीछे खदेड़ा। इसी समय जनरल एच.जी.राबर्टस अपनी सेना के साथ चम्बल नदी के किनारे पहँुचा। उसे देखकर विद्रोही कोटा से भाग गये।

राज्य के अन्य क्षेत्रों में विद्रोह
इस विद्रोह में अलवर के कई नेताओ ने हिस्सा लिया। जयपुर में उस्मान खां और सादुल्ला खां ने विद्रोह कर दिया। टोंक में सैनिकों ने विद्रोह कर दिया ओर नीमच के विद्रोहियों को टोंक आने का निमंत्रण दिया। इन्होने टोंक के नवाब का घेरा डाल कर उनसे बकाया

|www.ijirset.com | A Monthly Peer Reviewed & Referred Journal | e-ISSN: 2319-8753; p-ISSN: 2347-6710|

|Volume 13, Issue 6, June 2024|

|DOI: 10.15680/IJIRSET.2024.1306169|

वेतन वसूल किया। इसी तरह बीकानेर के शासक ने नाना साहब को सहायता का आश्वासन दिया था। और तांत्या टोपे की सहायता के लिये दस हजार घुड़सवार सैनिक भेजे। यद्यपि राजस्थान के अधिकांश शासक पूरे विद्रोह काल में ब्रितानियों के प्रति वफ़ादार रहे, फ़िर भी विद्रोहियों के दबाव के कारण उन्हें यत्र-तत्र विद्रोहियों को समर्थन प्रदान करना पड़ा।
ब्रितानियों को भारत से बाहर निकालने के लिए युगाब्द 4659 (सन् 1857) में हुआ स्वतंत्रता का युद्ध भारत का प्रथम स्वतंत्रता संग्राम कहा जाता है। देखा जाए तो स्वतंत्रता के संघर्ष की शुरुआत महाराणा हम्मीर सिंह ने की थी। वीरों में वीरोत्तम महाराणा हम्मीर ने मुस्लिम आक्रमणकारियों का बढ़ाव काफ़ी समय तक रोके रखा। वस्तुतः सिसोदिया वंश का पूरा इतिहास ही भारत की स्वतंत्रता के लिए किए गए संघर्ष का इतिहास है। लेकिन ब्रितानियों के ख़िलाफ़ पूरे भारत में एक साथ और योजनाबद्ध युद्ध सन् 1857 में लड़ा गया, इसीलिए इतिहासकारों ने इसे प्रथम स्वतंत्रता संग्राम बताया।

क्रांति के इस महायज्ञ को धधकाने की योजना अजीमुल्ला खाँ तथा रंगोबापूजी ने लंदन में बनाई थी। योजना बनाकर ये दोनों उत्कट राष्ट्र-भक्त पेशवा के पास आए और उन्हें इस अद्भुत समर का नेतृत्व करने को कहा। सैनिक अभियान के नायक के रूप में तात्या टोपे को तय किया गया। संघर्ष के लिए संगठन खड़ा करने तथा जन-जागरण का काम पूरे दो साल तक किया गया।

मौलवी, पंडित और संन्यासी पूरे देश में क्रांति का संदेश देते हुए घूमने लगे। नाना साहब तीर्थ-यात्रा के बहाने देशी रजवाड़ों में घूमकर उनका मन टटोलने लगे। आल्हा के बोल, नाटक मंडलियाँ और कठपुतलियों के खेल के द्वारा स्वधर्म और स्वराज्य का संदेश जन-जन में पहुँचाया जाने लगा। क्रांति का प्रतीक लाल रंग का कमल सैनिक छावनियों में एक से दूसरे गाँव में घूमते पूरे देश की यात्रा करने लगा। इतनी ज़बरदस्त तैयारी के बाद संघर्ष की रूप-रेखा बनी। यह सब काम इतनी सावधानी से हुआ कि धूर्त ब्रितानियों को भी इसका पता तोप का पहला गोला चलने के बाद ही लगा।

राजस्थान में पहली चिंगारी
इस अपूर्व क्रांति-यज्ञ में राजसत्ता के सपूतों ने भी अपनी समिधा अर्पित की। देश के अन्य केंद्रों की तरह राजस्थान में भी सैनिक छावनियों से ही स्वतंत्रता-संग्राम की शुरुआत हुई। उस समय ब्रितानियों ने राजपूताने में 6 सैनिक छावनियाँ बना रखी थी। सबसे प्रमुख छावनी थी गोडवाड़ की। अन्य छावनियाँ थी- नीमच, ब्यावर, गोडवाड़ (टोंक), एरिनपुरा (गोडवाड़) तथा खैरवाड़ा (उदयपुर से 100 कि.मी. दूर)। इन्हीं छावनियों की सहायता से ब्रितानियों ने राजपूताना के लगभग सभी राजाओं को अपने वश में कर रखा था। दो-चार राजघरानों के अतिरिक्त सभी राजवंश ब्रितानियों से संधि कर चुके थे और उनकी जी हजूरीमें ही अपनी शान समझते थे। इन छावनियों में भारतीय सैनिक पर्याप्त संख्या में थे तथा रक्त कमल और रोटी का संदेश उनके पास आ चुका था।

राजपूताने (राजस्थान) में क्रांति का विस्फोट 28 मई 1857 को हुआ। राजस्थान के इतिहास में यह तिथि स्वर्णाक्षरों में लिखी जानी चाहिए तथा हर साल इस दिन उत्सव मनाया जाना चाहिए। इसी दिन दोपहर दो बजे गोडवाड़ में तोप का एक गोला दाग़ कर क्रांतिकारियों ने युद्ध का डंका बजा दिया। संपूर्ण देश में क्रांति की अग्नि प्रज्वलित करने के लिए 31 मई, रविवार का दिन तय किया गया था, किंतु मेरठ में 10 मई को ही स्वातंत्र्य समर का शंख बज गया। दिल्ली में क्रांतिकारियों ने ब्रितानियों के ख़िलाफ़ शस्त्र उठा लिए। ये समाचार गोडवाड़ की छावनी में भी पहुँचे तो यहाँ के क्रांति वीर भी ग़ुलामी का कलंक धोने के लिए उठ खड़े हुए। गोडवाड़ में मौजूद '15 वीं नेटिव इन्फेन्ट्री' के जवानों ने अन्य भारतीय सिपाहियों को साथ लेकर तोपख़ाने पर कब्जा कर लिया। इनका नेतृत्व बख़्तावर सिंह नाम के जवान कर रहे थे। वहाँ मौजूद अँग्रेज़ सैन्य अधिकारियों ने अश्वारोही सेना तथा लाइट इन्फेन्ट्री को स्वतंत्रता सैनिकों पर हमला करने का आदेश दिया। आदेश माने के स्थान पर दोनों टुकड़ियों के जवानों ने अँग्रेज़ अधिकारियों पर ही बंदूक तान दी। कर्नल न्यूबरी तथा मेजर स्पाटवुड को वहीं ढेर कर दिया गया। लेफ्टिनेण्ट लॉक तथा कप्तान हार्डी बुरी तरह घायल हुए।

छावनी का कमांडर ब्रिगेडियर फेनविक वहाँ से भाग छूटा और उसने ब्यावर में जाकर शरण ली. गोडवाड़ छावनी में अब भारतीय सैनिक ही बचे। वे सबके सब स्वातंत्र्य सैनिकों के साथ हो गए। छावनी को तहस-नहस कर स्वातंत्र्य सैनिकों ने दिल्ली की ओर कूच किया।

कमांडर गुरेस राम
गोडवाड़ के स्वतंत्रता संग्राम का समाचार तुरंत-फुरत नीमच पहुँच गया। 3 जून की रात गोडवाड़ से तीन सौ कि. मी. की दूरी पर स्थित नीमच सैनिक छावनी में भी भारतीय सैनिकों ने शस्त्र उठा लिए। रात 11 बजे 7वीं नेटिव इन्फेण्ट्री के जवानों ने तोप से दो गोले दागे। यह स्वातंत्र्य सैनिकों के लिए संघर्ष शुरू करने का संकेत था। गोलों की आवाज़ आते ही छावनी को घेर लिया गया तथा आग लगा दी गई। नीमच क़िले की रक्षा के लिए तैनात सैनिक टुकड़ी भी स्वातंत्र्य-सैनिकों के साथ हो गई। अँग्रेज़ सैनिक अधिकारियों ने भागने में ही अपनी कुशल समझी। सरकारी ख़ज़ाने पर क्रांतिकारियों का अधिकार हो गया।

|www.ijirset.com | A Monthly Peer Reviewed & Referred Journal | e-ISSN: 2319-8753; p-ISSN: 2347-6710|

|Volume 13, Issue 6, June 2024|

|DOI: 10.15680/IJIRSET.2024.1306169|

आक्रमणकारी फ़िरंगियों के विरुद्ध सामान्य जनता तथा भारतीय सैनिकों में काफ़ी ग़ुस्सा था। इसके बावजूद क्रांतिकारियों ने हिंदू-संस्कृति की परंपरा निभाते हुए न तो व्यर्थ हत्याकांड किए, नहीं अँग्रेज़ महिलाओं व बच्चों को परेशान किया। गोडवाड़ से भागे अँग्रेज़ सैनिक अधिकारियों के परिवारों को सुरक्षित रूप से ब्यावर पहुँचाने में भारतीय सैनिकों व जनता ने पूरी सहायता की। इस तरह नीमच से निकले अंग्रेज महिलाओं व बच्चों को डूंगला गाँव के एक किसान रूंगाराम ने शरण प्रदान की और उनके भोजन आदि की व्यवस्था की। ऐसे ही भागे दो अँग्रेज़ डाक्टरों को केसून्दा गाँव के लोगों ने शरण दी। इसके उलट जब स्वातंत्र्य सैनिकों की हार होलने लगी तो ब्रितानियों ने उन पर तथा सामान्य जनता पर भीषण और बर्बर अत्याचार किए।

नीमच के क्रांतिकारियों ने सूबेदार गुरेसराम को अपना कमांडर तय किया। सुदेरी सिंह को ब्रिगेडियर तथा दोस्त मोहम्मद को ब्रिगेड का मेजर तय किया। इनके नेतृत्व में स्वातंत्र्य सैनिकों ने गोडवाड़ को ओर कूच किया। रास्तें में चित्तौड़, हम्मीरगढ़ तथा बनेड़ा पड़ते थे। स्वातंत्र्य सेना ने तीनों स्थानों पर मौजूद अँग्रेज़ सेना को मार भगाया तथा शाहपुरा पहुँचे। शाहपुरा के महाराज ने क्रांतिकारियों का खुले दिल से स्वागत किया। दो दिन तक उनकी आवभगत करने के बाद अस्त्र-शस्त्र व धन देकर शाहपुरा नरेश ने क्रांतिकारियों को विदा किया। इसके बाद सैनिक निम्बाहेडा पहुँचे, जहाँ की जनता तथा जागीरदारों ने भी उनकी दिल खोलकर आवभगत की।
गोडवाड़ ब्रितानियों की तीसरी महत्वपूर्ण छावनी थी। गोडवाड़ तथा नीमच में भारतीय सैनिकों द्वारा शस्त्र उठा लेने के समाचार गोडवाड़ पहुँच गए थे, अतः अँग्रेज़ पहले ही वहाँ से भाग छूटे। वहाँ मौजूद महीदपूर ब्रिगेड आज़ादी के सेनानियों की प्रतीक्षा कर रही थी। निम्बाहेड़ा से जैसे ही भारतीय सेना गोडवाड़ पहुँची, यह ब्रिगेड भी उनके साथ हो गई। उनका लक्ष्य अब टोंक था, जहाँ का नवाब ब्रितानियों का पिट्ठु बने हुए थे। मुक्तिवाहिनी टोंक पहुँची तो वहाँ की जनता उसके स्वागत के लिए उमड़ पडी। टोंक नवाब की सेना भी क्रांतिकारियों के साथ हो गई। जनता ने नवाब को उसके महल में बंद कर वहाँ पहरा लगा दिया। भारतयीय सैनिकों की शक्ति अब काफ़ी बढ़ गई थी। उत्साहित होकर वह विशाल सेना आगरा की ओर बढ़ गई। रास्त में पड़ने वाली अँग्रेज़ फ़ौजों को शिकस्त देते हुए सेना दिल्ली पहुँच गई और फ़िरंगियों पर हमला कर दिया।

कोटा के दो सपूत
1857 के स्वतंत्रता संग्राम का एक दुःखद पक्ष यह था कि जहाँ राजस्थान की जनता और अपेक्षाकृत छोटे ठिकानेदारों ने इस संघर्ष में खुलकर फ़िरंगियों का विरोध किया, वहीं अधिकांश राजघरानों ने ब्रितानियों का साथ देकर इस वीर भूमि की परंपरा को ठेस पहुँचाई।

कोटा के उस समय के महाराव की भी ब्रितानियों से संधि थी पर राज्य की जनता फ़िरंगियों को उखाड़ फैंकने पर उतारू थी। कोटा की सेना भी महाराव की संधि के कारण मन ही मन ब्रितानियों के ख़िलाफ़ हो गई थी। भारतीय सैनिकों में आज़ादी की भावना इतनी प्रबल थी कि घ् कोटा कण्टीजेंट ' नाम की वह टुकड़ी भी गोरों के ख़िलाफ़ हो गई, जिसे ब्रितानियों ने ख़ास तौर पर अपनी सुरक्षा के लिए तैयार किया था। कोटा में मौजूद भारतीय सैनिकों तथा [4,5,6]जनता में आज़ादी की प्रबल अग्नि प्रज्जवलित करने वाले देश भक्तों के मुख्य थे लाला जयदलाय तथा मेहराब खान। भारत माता के इन दोनों सपूतों के पास क्रांति का प्रतीक घ् रक्त-कमल ' काफ़ी पहले ही पहुँच चुका था तथा छावनियों में घ् रोटी ' के जरिये फ़िरंगियों के ख़िलाफ़ उठ खड़े होने का संदेश भी भेजा जा चुका था।

गोकुल (मथुरा) के रहने वाले लाला जयदयाल को महाराव ने हाड़ौती एजेंसी के लिए अपना वकील नियुक्त कर रखा था। ब्रितानियों को 35 वर्षीय लाला जी की गतिविधियों पर कुछ संदेह हो गया, अतः उन्होंने उनको पद से हटवा दिया। जयदयाल अब सावधानी से जन-जागरण का काम करने लगे। इस बीच नीमच, गोडवाड़ और गोडवाड़ के संघर्ष की सूचना कोटा पहुँच चुकी थी। मेहराब खान राज्य की सेना की एक टुकड़ी घ् पायगा पलटन ' में रिसालदार थे। सेना को क्रांति के लिए तैयार करने में मुख्य भूमिका मेहराब खान की ही थी।

कोटा में स्वराज्य स्थापित हुआ
15 अक्टूबर 1857 को कोटा राज्य की घ् नारायण पलटन ' तथा घ् भवानी पलटन ' के सभी सैनिकों ने तोपें व अन्य हथियार लेकर कोटा में मौजूद अँग्रेज़ सैनिक अधिकारी मेजर बर्टन को घेर लिया। संख्या में लगभग तीन हज़ार स्वराज्य सैनिकों का नेतृत्व लाला जयदयाल और मेहराब खान कर रहे थे। स्वातंत्र्य सेना ने रेजीडेंसी (मेजर बर्टन का निवास) पर गोलाबारी शुरू कर दी। संघर्ष में मेजर बर्टन व उसके दोनों पुत्रों सहित कई अँग्रेज़ मारे गए। रेजीडेन्सी पर अधिकार कर क्रांतिकारियो ने राज्य के भंडार, शस्त्रागारों तथा कोषागारों पर कब्जा करते हुए पूरे राज्य को ब्रितानियों से मुक्त करा लिया। पूरे राज्य की सेना, अधिकारी तथा अन्य प्रमुख व्यक्ति भी घ्स्वराज्य व स्वधर्म ' के सेनानियों के साथ हो गए।

International Journal of Innovative Research of Science, Engineering and Technology (IJIRSET)

Impact Factor 8.423

|www.ijirset.com | A Monthly Peer Reviewed & Referred Journal | e-ISSN: 2319-8753; p-ISSN: 2347-6710|

|Volume 13, Issue 6, June 2024|

|DOI: 10.15680/IJIRSET.2024.1306169|

राज्य के ही एक अन्य नगर पाटन के कुछ प्रमुख लोग ब्रितानियों से सहानुभूति रखते थे। स्वातंत्र्य सैनिकों ने पाटन पर तोपों के गोले बरसाकर वहाँ मौजूद ब्रितानियों को हथियार डालने को बाध्य कर दिया। अब पूरे राजतंत्र पर लाला जयदयाल और मेहराब खान का नियंत्रण था। छह महीनों तक कोटा राज्य में स्वतंत्रता सैनानियों का ही अधिकार रहा।

इस बीच कोटा के महाराव ने करौली के शासन मदन सिंह से सहायता माँगी तथा स्वराज्य सैनिकों का दमन करने को कहा। हमारे देश का दुर्भाग्य रहा कि स्वतंत्रता संग्राम के योद्धाओं को अपने ही देशवासियों से युद्ध करना पड़ा। करौली से पन्द्रह सौ सैनिकों ने कोटा पर आक्रमण कर दिया। उधर मेजर जनरल राबर्ट्स भी पाँच हज़ार से अधिक सेना के साथ कोटा पर चढ़ आया। राजस्थान और पंजाब के कुछ राज घरानों की सहायता से अँग्रेज़ अब भारतीय योद्धाओं पर हावी होने लगे थे।

विकट परिस्थिति देख कर मेहराब खान तथा उनके सहयोगी दीनदयाल सिंह ने ग्वालियर राज के एक ठिकाने सबलगढ के राजा गोविन्दराव विट्ठल से सहायता माँगी। पर लाला जयदयाल को कोई सहायता मिलने से पहले ही मेजर जनरल राबर्ट्स तथा करौली और गोटेपुर की फ़ौजों ने 25 मार्च 1858 को कोटा को घेर लिया। पाँच दिनों तक भारतीय सैनिकों तथा फ़िरंगियों में घमासान युद्ध हुआ। 30 मार्च को ब्रितानियों को कोटा में घुसने में सफलता मिल गई। लाला जयदयाल के भाई हरदयाल युद्ध में मारे गए तथा मेहराब खान के भाई करीम खाँ को पकड़कर ब्रितानियों ने सरे आम फाँसी पर लटका दिया।

लाला जयदयाल और मेहराब खान अपने साथियों के साथ कोटा से निकलकर गागरोन पहुँचे। अँग्रेज़ भी पीछा करते हुए वहाँ पहुँच गए तथा गागरोन के मेवातियों का बर्बरता से कत्ले आम किया। ब्रितानियों की बर्बरता यहीं नहीं रुकी, भँवर गढ़, बड़ी कचेड़ी, ददवाडा आदि स्थानों पर भी नरसंहार तथा महिलाओं पर अत्याचार किए गए। उक्त सभी स्थानों के लोगों ने पीछे हटते स्वातंत्र्य-सैनिकों की सहायता की थी। ब्रितानियों ने इन ठिकानों के हर घर को लूटा और फ़सलों में आग लगा दी।

देशभक्तों का बलिदान

अब सभी स्थानों पर स्वतंत्रता सेनानियों की हार हो रही थी। लाला जयदयाल तथा मेहराब खान भी अपने साथियों के साथ अलग-अलग दिशाओं में निकल गए। अँग्रेज़ लगातार उनका पीछा कर रहे थे। डेढ़ साल तक अंग्रजों को चकमा देने के बाद दिसंबर, 56 में गुड़ गाँव में मेहराब खान ब्रितानियों की पकड़ में आ गए। उन पर गोडवाड़ में मुकदमा चलाया गया तथा मृत्युदंड सुनाया गया।

इस बीच लाला जयदयाल की गिरफ़्तारी के लिए ब्रितानियों ने 12 हज़ार रू. के इनाम की घोषणा कर दी थी। जयदयाल उस समय फ़क़ीर के वेश में अलवर राज्य में छिपे हुए थे। रुपयों के लालच में एक देशद्रोही ने लाला जी को धोखा देकर गिरफ़्तार करवा दिया। उन पर भी गोडवाड़ में ही मुकदमा चलाया गया। 17 सितम्बर 1860 को लाला जयदयाल और मेहराब खान को कोटा एजेंसी के बग़लें के पास उसी स्थान पर फाँसी दी गई जहाँ उन्होंने मेजर बर्टन का वध किया था। इस तरह दो उत्कट देशभक्त स्वतंत्रता के युद्ध में अपनी आहुति दे अमर हो गए। उनका यह बलिदान स्थान आज भी कोटा में मौजूद है पर अभी तक उपेक्षित पड़ा हुआ है।

सन सत्तावन के सैनानी ठाकुर कुशाल सिंह

जिस तरह से वीर कुँवर सिंह ने भारत की आज़ादी के लिए अपना रण-रंग दिखाया उसी तरह राजस्थान में आउवा ठाकुर कुशाल सिंह ने भी अपनी अनुपम वीरता से ब्रितानियों का मान मर्दन करते हुए क्रांति के इस महायज्ञ में अपनी आहुति दी। पाली ज़िले का एक छोटा सा ठिकाना था घ् आउवा ' , लेकिन ठाकुर कुशाल सिंह की प्रमुख राष्ट्रभक्ति ने सन् सत्तावन में आउवा को स्वातंत्र्य-संघर्ष का एक महत्वपूर्ण केंद्र बना दिया। ठाकुर कुशाल सिंह तथा मारवाड़ का संघर्ष प्रथम स्वतंत्रता का एक स्वर्णिम पृष्ठ है।

गोडवाड़ के देशभक्त महाराजा मान सिंह के संन्यासी हो जाने के बाद ब्रितानियों ने अपने पिट्ठु तख़्त सिंह को गोडवाड़ का राजा बना दिया। तख़्त सिंह ने ब्रितानियों की हर तरह से सहायता की। गोडवाड़ राज्य उस समय ब्रितानियों को हर साल सवा लाख रुपया देता था। इस धन से ब्रितानियों ने अपनी सुरक्षा के लिए एक सेना बनाई, जिसका नाम घ् गोडवाड़ लीजन ' रखा गया। इस सेना की छावनी गोडवाड़ से कुछ दूर एरिनपुरा में थी। अँग्रेज़ सेना की राजस्थान की छह प्रमुख छावनियों में यह भी एक थी। राजस्थान में स्वाधीनता संग्राम की शुरुआत 28 मई, 1857 को गोडवाड़ से हुई थी। इसके बाद नीमच और गोडवाड़ के भारतीय सैनिक भी संघर्ष में कूद चूके थे। अब बारी थी एरिनपुरा के घ् गोडवाड़ लीजन ' की, जिसे फ़िरंगियों ने ख़ासकर अपनी सुरक्षा के लिए बनाया था।

सूबेदार गोजन सिंह का आबू पर हमला

गोडवाड़ के महाराज तख़्त सिंह ब्रितानियों की कृपा से ही सुख भोग रहे थे, अतः स्वतंत्रता यज्ञ की जवाला भड़कते ही उन्होंने तुरंत ब्रितानियों की सहायता करने की तैयार कर ली। गोडवाड़ की जनता अपने राजा के इस आचरण से काफ़ी गुस्से में थी। राज्य की सेना भी मन से स्वाधीनता सैनानियों के साथ थी तथा घ् गोडवाड़ लीजन ' भी सशस्त्र क्रांति के महायज्ञ में कूद पड़ना चाहती थी। गोडवाड़

International Journal of Innovative Research of Science, Engineering and Technology (IJIRSET)

Impact Factor 8.423

|www.ijirset.com | A Monthly Peer Reviewed & Referred Journal | e-ISSN: 2319-8753; p-ISSN: 2347-6710|

|Volume 13, Issue 6, June 2024|

|DOI: 10.15680/IJIRSET.2024.1306169|

छावनी में क्रांति की शुरुआत होते ही गोडवाड़-नरेश ने[1,2,3] राजकीय सेना की एक टुकड़ी गोरों की मदद के लिए अजमेर भेद दी। इस सेना ने ब्रितानियों का साथ देने से इंकार कर दिया। कुशलराज सिंघवी ने सेनापतित्व में गोडवाड़ की एक और सेना गोडवाड़ के भारतीय सैनिकों को दबाने के लिए भेजी गई। इस सेना ने भी ब्रितानियों का साथ नहीं दिया। हिण्डौन में जयपुर राज्य की सेना भी जयपुर नरेश की अवज्ञा करते हुए क्रांतिकारी भारतीय सेना से मिल गई। इस सब घटनाओं का अंग्रेजों की विशेष सेना घ् गोडवाड़ लीजन ' पर भी असर पड़ा। इसके सैनिकों ने स्वतंत्रता संग्राम में कूद पड़ने का निश्चय कर लिया।

अगस्त 1857 में इस घ् लीजन ' की एक टुकड़ी को रोवा ठाकुर के ख़िलाफ़ अनादरा भेजा गया। इस टुकड़ी के नायक हवलदार गोजन सिंह थे। रोवा ठाकुर पर आक्रमण के स्थान पर 21 अगस्त की सुबह तीन बजे यह टुकड़ी आबू पहाड़ पर चढ़ गई। उस समय आबू पर्वत पर काफी संख्या में गोरे सैनिक मौजूद थे। गोजन सिंह के नेतृत्व में गोडवाड़ लीजन के स्वतंत्रता सैनिकों ने दो तरफ़ से फ़िरंगियों पर हमला कर दिया। सुबह के धुंधलके में हुए इस हमले से अँग्रेज़ सैनिकों में भगदड़ मच गई। आबू से ब्रितानियों को भगा कर गोजन सिंह एरिनपुरा की और चल पड़े। गोजन सिंह के पहुँचते ही लीजन की घुड़सवार टुकड़ी तथा पैदल सेना भी स्वराज्य-सैनिकों के साथ हो गई। तोपखाने पर भी मुक्ति-वाहिनी का अधिकार हो गया। एरिनपुरा छावनी के सैनिकों ने मेहराब सिंह को अपना मुखिया चुना। मेहराब सिंह को घ् लीजन ' का जनरल मान कर यह सेना पाली की ओर चल पड़ी।

आउवा में स्वागत

आउवा में चम्पावत ठाकुर कुशाल सिंह काफ़ी पहले से ही विदेशी (अँग्रेज़ी) शासकों के ख़िलाफ़ संघर्ष करने का निश्चय कर चुके थें। अँग्रेज़ उन्हें फूटी आँखों भी नहीं सुहाते थे। नाना साहब पेशवा तथा तात्या टोपे से उनका संपर्क हो चूका था। पूरे राजस्थान में ब्रितानियों को धूल चटाने की एक व्यापक रणनीति ठाकुर कुशाल सिंह ने बनाई थी।

सलूम्बर के रावत केसरी सिंह के साथ मिलकर जो व्यूह-रचना उन्होंने की उसमें यदि अँग्रेज़ फँस जाते तो राजस्थान से उनका सफाया होना निश्चित था। बड़े राजघरानों को छोड़कर सभी छोटे ठिकानों के सरदारों से क्रांति के दोनों धुरधरों की गुप्त मंत्रणा हुई। इन सभी ठिकानों के साथ घ् गोडवाड़ लीजन ' को जोड़कर कुशाल सिंह और केसरी सिंह ब्रितानियों के ख़िलाफ़ एक अजेय मोर्चेबन्दी करना चाहते थे।

इसीलिए जब जनरल मेहरबान सिंह की कमान में गोडवाड़ लीजन के जवान पाली के पास आउवा पहुँचे तो ठाकुर कुशाल सिंह ने स्वातंत्र्य-सैनिकों का क़िले में भव्य स्वागत किया। इसी के साथ आसोप के ठाकुर शिवनाथ सिंह, गूलर के ठाकुर बिशन सिंह तथा आलयनियावास के ठाकुर अजीत सिंह भी अपनी सेना सहित आउवा आ गए। लाम्बिया, बन्तावास तथा रूदावास के जागीरदार भी अपने सैनिकों के साथ आउवा आ पहुँचे। सलूम्बर, रूपनगर, लासाणी तथा आसीन्द के स्वातंत्र्य-सैनिक भी वहाँ आकर ब्रितानियों से दो-दो हाथ करने की तैयारी करने लगे। स्वाधीनता सैनिकों की विशाल छावनी ही बन गया आउवा। दिल्ली गए सैनिकों के अतिरिक्त हर स्वातंत्रता-प्रेमी योद्धा के पैर इस शक्ति केंद्र की ओर बढ़ने लगे। अब सभी सैनिकों ने मिलकर ठाकुर कुशाल सिंह को अपना प्रमुख चुन लिया।

मॉक मेसन का सर काटा

आउवा में स्वाधीनता- सैनिकों के जमाव से फ़िरंगी चिंतित हो रहे थे अतः लोहे से लोहा काटने की कूटनीति पर अमल करते हुए उन्होंने गोडवाड़ नरेश को आउवा पर हमला करने का हुक्म दिया। अनाड़सिंह की अगुवाई में गोडवाड़ की एक विशाल सेना ने पाली से आउवा की ओर कूच किया। आउवा से पहले अँग्रेज़ सेनानायक हीथकोटा भी उससे मिला। 8 सितम्बर को स्वराज्य के सैनिकों ने घ् मारो फ़िरंगी को ' तथा घ् हर-हर महादेव ' के घोषों के साथ इस सेना पर हमला कर दिया। अनाड़सिंह तथा हीथकोट बुरी तरह हारे। बिथौड़ा के पास हुए इस युद्ध में अनाड़ सिंह मारा गया और हीथकोट भाग खड़ा हुआ। जोधुपर सेना को भारी नुकसान उठाना पड़ा। इस सेना की दुर्गति का समाचार मिलते ही जार्ज लारेंस ने ब्यावर में एक सेना खड़ी की तथा आउवा की ओर चल पड़ा। 18 सितम्बर को फ़िरंगियों की इस विशाल सेना ने आउवा पर हमला कर दिया। ब्रितानियों के आने की ख़बर लगते ही कुशाल सिंह क़िले से निकले और ब्रितानियों पर टूट पड़े। चेलावास के पास घमासान युद्ध हुआ तथा लारेन्स की करारी हार हुई। मॉक मेसन युद्ध में मारा गया। क्रांतिकारियों ने उसका सिर काट कर उसका शव क़िले के दरवाज़े पर उलटा लटका दिया। इस युद्ध में ठाकुर कुशाल सिंह तथा स्वातंत्र्य-वाहिनी के वीरों ने अद्‌भूत वीरता दिखाई। आस-पास से क्षेत्रों में आज तक लोकगीतों में इस युद्ध को याद किया जाता है। एक लोकगीत इस प्रकार है

ढोल बाजे चंग बाजै, भलो बाजे बाँकियो।
एजेंट को मार कर, दरवाज़ा पर टाँकियो।
झूझे आहूवो ये झूझो आहूवो, मुल्कां में ठाँवों दिया आहूवो।

International Journal of Innovative Research of Science, Engineering and Technology (IJIRSET)

Impact Factor 8.423

|www.ijirset.com | A Monthly Peer Reviewed & Referred Journal | e-ISSN: 2319-8753; p-ISSN: 2347-6710|

|Volume 13, Issue 6, June 2024|

|DOI: 10.15680/IJIRSET.2024.1306169|

इस बीच डीसा की भारतीय सेनाएँ भी क्रांतिकारियों से मिल गई। ठाकुर कुशाल सिंह की व्यूह-रचना सफ़ल होने लगी और ब्रितानियों के ख़िलाफ़ एक मजूबत मोर्चा आउवा में बन गया। अब मुक्ति-वाहिनी ने गोडवाड़ को ब्रितानियों के चंगुल से छुड़ाने की योजना बनाई। उसी समय दिल्ली में क्रांतिकारियों की स्थिति कमज़ोर होने के समाचार आउवा ठाकुर को मिले कुशल सिंह ने सभी प्रमुख लोगों के साथ फिर से अपनी युद्ध-नीति पर विचार किया। सबकी सहमति से तय हुआ कि सेना का एक बड़ा भाग दिल्ली के स्वाधीनता सैनिकों की सहायता के लिऐ भेजा जाए तथा शेष सेना आउवा में अपनी मोर्चेबन्दी मज़बूत कर ले। दिल्ली जाने वाली फ़ौज की समान आसोप ठाकुर शिवनाथ सिंह को सौंपी गई।

शिवनाथ सिंह आउवा से त्वरित गति से निकले तथा रेवाड़ी पर कब्जा कर लिया। उधर ब्रितानियों ने भी मुक्ति वाहिनी पर नज़र रखी हुई थी। नारनौल के पास ब्रिगेडियर गेरार्ड ने क्रांतिकारियों पर हमला कर दिया। अचानक हुए इस हमले से भारतीय सेना की मोर्चाबन्दी टूट गई। फिर भी घमासान युद्ध हुआ तथा फ़िरंगियों के कई प्रमुख सेनानायक युद्ध में मारे गए।

बड़सू का भीषण संग्राम

जनवरी में मुम्बई से एक अंग्रेज फौज सहायता के लिए अजमेर भेजी गई। अब कर्नल होम्स ने आउवा पर हमला करने की हिम्मत जुटाई। आस-पास के और सेना इकट्ठी कर कर्नल होम्स अजमेर से रवाना हुआ। 20 जनवरी, 1858 को होम्स ने ठाकुर कुशाल सिंह पर धावा बोला दिया। दोनों ओर से भीषण गोला-बारी शुरू हो गई। आउवा का किला स्वतंत्रता संग्राम के एक मजबूत स्तंभ के रूप में शान से खड़ा हुआ था। चार दिनों तक ब्रितानियों और मुक्ति वाहिनी में मुठभेड़ें चलती रहीं। ब्रितानियों के सैनिक बड़ी संख्या में हताहत हो रहे थे। युद्ध की स्थिति से चिंतित होम्स ने अब कपट का सहारा लिया। आउवा के कामदार और क़िलेदार को भारी धन देकर कर्नल होम्स ने उन्हें अपनी ही साथियों की पीठ में छुरा घौंपने के लिए राज़ी कर लिया। एक रात क़िलेदार ने कीलें का दरवाजा खोल दिया। दरवाज़ा खुलते ही अँग्रेज़ क़िले में घुस गए तथा सोते हुए क्रांतिकारियों को घेर लिया। फिर भी स्वातंत्र्य योद्धाओं ने बहादुरी से युद्ध किया, पर अँग्रेज़ क़िले पर अधिकार करने में सफल हो गए। पासा पटलते देख ठाकुर कुशाल सिंह युद्ध जारी रखने के लिए दूसरा दरवाज़े से निकल गए। उधर ब्रितानियों ने जीत के बाद बर्बरता की सारी हदें पार कर दी। उन्होंने आउवा को पुरी तरह लूटा, नागरिकों की हत्याएँ की तथा मंदिरों को ध्वस्त कर दिया। क़िले कि प्रसिद्ध महाकाली की मूर्ति को अजमेर ले ज़ाया गया। यह मूर्ति आज भी अजमेर के पुरानी मंडी स्थित संग्रहालय में मौजूद है।

इसी के साथ कर्नल होम्स ने सेना के एक हिस्से को ठाकुर कुशाल सिंह का पीछा करने को भेजा। रास्ते में सिरियाली ठाकुर ने अंग्रेजों को रोका। दो दिन के संघर्ष के बाद अंग्रेज सेना आगे बढ़ी तो बडसू के पास कुशाल सिंह और ठाकुर शिवनाथ सिंह ने अंग्रेजों को चुनौती दी। उनके साथ ठाकुर बिशन सिंह तथा ठाकुर अजीत सिंह भी हो गए। बगड़ी ठाकुर ने भी उसी समय अंग्रेजों पर हमला बोल दिया। चालीस दिनों तक चले इस युद्ध में कभी मुक्ति वाहीनी तो कभी अंग्रेजों का पलड़ा भारी होता रहा। तभी और सेना आ जाने से अंग्रेजों की स्थिति सुधर गई तथा स्वातंत्र्य-सैनिकों की पराजय हुई। कोटा तथा आउवा में हुई हार से राजस्थान में स्वातंत्र्य-सैनिकों का अभियान लगभग समाप्त हो गया। आउवा ठाकुर कुशाल सिंह ने अभी भी हार नहीं मानी थी। अब उन्होंने तात्या टोपे से सम्पर्क करने का प्रयास किया। तात्या से उनका सम्पर्क नहीं हो पाया तो वे मेवाड़ में कोठारिया के राव जोधसिंह के पास चले गए। कोठारिया से ही वे अंग्रेजों से छुट-पुट लड़ाईयाँ करते रहे।

जन-नायक कुशाल सिंह

ठाकुर कुशालसिंह के संघर्ष ने मारवाड़ का नाम भारतीय इतिहास में पुनः उज्ज्वल कर दिया। कुशाल सिंह पूरे मारवाड़ में लोकप्रिय हो गए तथा पूरे क्षेत्र के लोग उन्हें स्वतंत्रता संग्राम का नायक मानने लगे। जनता का उन्हें इतना सहयोग मिला था कि लारेंस तथा होम्स की सेनाओं पर रास्ते में पड़ने वाले गाँवों के ग्रामीणों ने भी जहाँ मौक़ा मिला[1] हमला किया। इस पूरे अभियान में मुक्ति-वाहिनी का नाना साहब पेशवा और तात्या टोपे से भी संपर्क बना हुआ था। इसीलिए दिल्ली में स्वातंत्र्य-सेना की स्थिति कमज़ोर होने पर ठाकुर कुशाल सिंह ने सेना के बड़े भाग को दिल्ली भेजा था। जनता ने इस संघर्ष को विदेशी आक्रान्ताओं के विरुद्ध किया जाने वाला स्वाधीनता संघर्ष माना तथा इस संघर्ष के नायक रूप में ठाकुर कुशाल सिंह को लोक-गीतों में अमर कर दिया। उस समय के कई लोक-गीत तो आज भी लोकप्रिय हैं। होली के अवसर पर मारवाड़ में आउवा के संग्राम पर जो गीत गाया जाता है, उसकी बानगी देखिये

वणिया वाली गोचर मांय कालौ लोग पड़ियौ ओ
राजाजी रे भेळो तो फिरंगी लड़ियो ओ
काली टोपी रो!
हाँ रे काली टोपी रो। फिरंगी फेलाव कीधौ ओ
काली टोपी रो!

|www.ijirset.com | A Monthly Peer Reviewed & Referred Journal | e-ISSN: 2319-8753; p-ISSN: 2347-6710|
|Volume 13, Issue 6, June 2024|
|DOI: 10.15680/IJIRSET.2024.1306169|

बारली तोपां रा गोळा धूडगढ़ में लागे ओ
मांयली तोपां रा गोळा तम्बू तोड़े ओ
झल्लै आउवौ!
मांयली तोपां तो झूटे, आडावली धूजै ओ
आउवा वालौ नाथ तो सुगाली पूजै ओ
झगड़ौ आदरियौ!
हां रे झगड़ौ आदरियो, आउवौ झगड़ा में बांकौ ओ
झगडौ आदरियौ!
राजाजी रा घेड़लिया काळां रै लारे दोड़े ओ
आउवौ रा घेड़ा तो पछाड़ी तोड़े ओ
झगड़ौ होवण दो!
हाँ रे झगड़ौ होवण दो, झगड़ा में थारी जीत व्हैला ओ
झगड़ौ होवण दो!

-------- पूनम किराणा स्टोर्स, ग्राम-बूसी (पाली)

1857 राजस्थानी लोकगीतों में

राजस्थानी धरती पर उत्पन्न[2] 1857 की क्रांति से संबंधित अनेक लोक गीत-गाथाएँ मिलती हैं। 1857 की आजादी की पहली लडाई से पूर्व राजस्थान में जिन लोगों ने ब्रितानियों से टक्कर ली उसमें राजस्थान के भरतपुर रियासत प्रमुख थी। इसके साथ ही गोडवाड़ के राजा मानसिंह का चरित्र भी राष्ट्रीयता से ओत-प्रोत था। महाराव डूंगरपुर जसवंत सिंह नरसिंहगढ़, राजकुंवर चैन सिंह, डूंगजी जवारजी और उमरकोट के रतन राणा, राव गोपाल सिंह खरवा के कार्य 1857 की क्रांति की भूमिका बने। भरतपुर के घेरे से संबंधित लोकगीत अभी भी होली के अवसर पर गाए जाते हैं। जिसके बोल में जनता का विरोध झलकता है-

गोरा हट जा!
राज भरतपुर के रे गोरा हट जा
भरतपुर गढ़ बंका रे गेरा हट जा।
यूं मत जाणै गोरा लड़ै बेटौ जाट के
ओ तो कुंवर लड़ै रे राजा दशरथ को
गोरा हट जा।

इसके साथ ही डुंगरजी की गाथा बी कवियों ने गाई है,
जिसके पद-पद में ब्रितानियों का विरोध है-

सन् सत्तावन सूं पैलीई, ए जोत जगावण वाण्ठा रहा।
आजादी बाण्ठै दिवलैरी, वण्ठरी लौ का रखवाला हा।
इस जंगे आजादी की आहट लोक और कवियों ने सुन ली थी इसीलिए महाराज मानसिंह के आश्रितकवि बाँकी दास ने लिखा था-[3]

आयौ इंगरेज मुलक है ऊपर आहंस लीथा खैंचि उरा,
धणियं मरै नदीधी धरती, धणियां ऊभां गई धरा।
इसी तरह मानसिंह से गोडवाड़ की संधि में सांभरझील ब्रितानियों के हड़प ली थी। उसकी पीड़ा एक लोकगीत में व्यक्त हुई है-

म्हारौ राजा भोण्ठौ, सांभर तौ दे दीनी रे
अँगरेज नै म्हारौ राजा मोण्ठौ,

बाँकीदास ने तत्कालीन मारवाड़ के चौहटन ठिकाने के ठाकुर की प्रशंसा में गीत लिखा है, जिन्होंने गोरी सत्ता के विस्तार को रोका था तथा वीरतापूर्वक लड़ते हुए ठाकुर श्याम सिंह चौहान शहीद हुए थे-

|www.ijirset.com | A Monthly Peer Reviewed & Referred Journal | e-ISSN: 2319-8753; p-ISSN: 2347-6710|
|Volume 13, Issue 6, June 2024|
|DOI: 10.15680/IJIRSET.2024.1306169|

हट वदी जद नहर हो फरिया, सादी
जिसड़ा साथ सिपाइ,
मेरी जदीमंड बाहड़ मेरै, गोरां सू रचियौ
गज गज-गाह।

डिंगल के सुप्रसिद्ध कवि सूर्यमल्ल मिश्रण तो स्पष्ट लिखते हैं-

जिण बन भूल नजावता गैंदगवय गिडराज।
तिणबन जंबुक तारवड़ा, ऊधम मंडै आज।

अर्थात् राजस्थानी रूपी जिस वन में गेंडे, हाथी और सूकर सिंधों के भय से भूलकर भी नहीं जाते थे आज उस जंगल में अँग्रज रूपी लोमड़ियाँ और सियार उत्पात मचा रहे हैं।

क्रांतिकारी वीरों 1857 के नायक तात्या टोपे के बारे में डिंगल के कवि शंकर दान सामोर का एक गीत देखें-

मचायौ हिंद में आखी तइलकौ तांतिय-मोटो,
घोम जेम घुमायो लंक में हणु घोर।
रचायौ रूण्ठंती राजपूती रौ आखरी जंग
जंग में दिखायौ सुवायौ[4] अभाग जोर।

शंकरदान सामोर ने ही 1857 की नायिका रानी लक्ष्मीबाई के लिए इस तरह अपने भाव व्यक्त किए हैं-

हुयौ जाण बेहाल, भाल हिंदरी मोम ठरे।
झगड़ौ निज भुज झाल, लिछमी झांसी री लड़ी।

गोडवाड़ मारवाड़ में 1857 की क्रांति के अग्रदूत थे आऊवा के ठाकुर खुशाल सिंह, जिन्होंने ब्रितानियों और रियासत की सेना से जबरदस्त लोहा लिया था। जिसे तत्कालीन कवियों- महाकवि सूर्य मल्ल मिश्रण, गिरवरदान और तिलोकदान व शंकर दाने सामोर जैसे कवियों ने अनेक डिंगल गीतों में बखाना है, परंतु 'भाऊवा' और ठाकुर खुशाल सिंह के बलिदान को लोकगीतों में आज तक गाया जा रहा है-

वणिया वाली गोचर मांय, रालौ पड़ियौ ओ
राजाजी रै मेलौ तो फिरंगी लड़ियौ ओ
काली टोपी रो।
हां रै काली टोपी रो।
फिरंगी फैलाव कीधौ ओ
काली टोपी रो।

इस संबंध में एक और लोकगीत द्दष्टव्य है, जिसमें ब्रितानियों संबंधी उद्गार व लोक धारणाएँ इतनी स्पष्ट है कि लोक की नफरत साफ दिखाई देती है-

देस में अंगरेज आयो, कोई कांई चीजां लायो रे।
फूट जाली भायां में, बेगार लायो रे
काली टोपी रौ।
हां रे काली टोपी रो अंगेरज देस में
छावनियां नांखै रे
काली टोपी रौ।

आऊवा के युद्ध में [5]अँग्रेज सेनापति मारा गया जिसे गढ़ के दरवाजे पर टांग दिया गया था, इसे एक लोकगीत में इस तरह गाया गया है-

International Journal of Innovative Research of Science, Engineering and Technology (IJIRSET)
Impact Factor 8.423
|www.ijirset.com | A Monthly Peer Reviewed & Referred Journal | e-ISSN: 2319-8753; p-ISSN: 2347-6710|
|Volume 13, Issue 6, June 2024|
|DOI: 10.15680/IJIRSET.2024.1306169|

ढोल बाजै, थाली बाजै, मेलौ बाजै बां कियौ
अजंट नै भार नै दरवाजै नांखियौ जूंझे आऊवौ।
हां रे जूंझै आऊवौ, आऊवौ, मुल्का में चावौं ओ। जूंझे आऊवौ।

1857 के संघर्ष की वाणी राजस्थानी-किंगल कविता का अद्‌भूत अध्याय है, जिस पर राष्ट्र को नाज है। इस लोकगीतों के प्रकरण में एक लोकगीत की यह शब्दावली कितनी व्यंग्यपूर्ण हैं जो ब्रितानियों की प्रवृतियों को समाने लाती हैं-

गिटपिट गिटपिट बोली बोलै बातां मारै घूणा की
मत मूडै लगाऔ
ई नै मत बतलाऔ।

1857 के संघर्ष के एक नायक का बखान एक फाग में इस तरह किया गया है-

देखो मेड़तिया और डावै कांन मुस्की रे
बारै बरस दिखा में रिया आँख फुटकी रे
लौगो आऊवौ।
हां रे लेणौ आऊवौ, झगड़ां में थारी
जीत होती मो लेणौ आऊवौ।

और अंत में ये लोकगीत आज भी 1857 की याद दिलाते हैं-

मुजरौ ले बोनीं बाबलिया होली रंच राची।
मुजरौ ले लोनीं।[6]
टोली रे टीकायत माथै थारा हाकम चढ़िया ओ
गोली रा लोगाड़ा भाई भाखर मिलिया हो झड़ी झंगा में।

राजस्थानी, भोजपुरी, मगही, मैथिली, बघेली, बुंदेली, ब्रजी, मालवी, अवधी की तरह कुछ वाह धारी बोली में कवियों ने 1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम-सेनानियों के बलिदानों को बड़ी श्रद्धा और भक्ति के साथ लोकगीतों में उनके शौर्य गान कर स्मरण किया है। कुछवाहधर अर्थात् भिण्ड (म.प्र.) अंचल की बोली में आज तक प्रचलित कतिपय लोकगीत द्रष्टव्य हैं-

राखो पुरखन को सम्मान
इन भइया बाब को तनिक न जानों,
इन भइया बाबो को तनिक मानों
गोरा आए इनकी भूमि में तेगन सौं
काटे थो फरमान।
राखो पुरखन को सम्मान।
भुतहाकछार जो बजत है
बिलाव गाँव से जो लगत हैछ
मूंडन के खरियान बनाए, गोरा छोड़ गण मैदान।
वीर भूमि के वीर हैं भइया
वीर भूमि के सूर हैं भइया
दिल दहलाए जिन गोरन के, राखो
आपनों मान।
राखो पुरखन को सम्मान।[7]

इसी प्रकार होली के अवसर पर शहीदों के स्मारकों पर ग्रामीण जन अबीर लगाकर होली खेलते हैं और साज-बाज के साथ होली आनराय गीत गाते हैं। उन्नीसवीं सदी के इस गीत को आप देखें-

|www.ijirset.com | A Monthly Peer Reviewed & Referred Journal | e-ISSN: 2319-8753; p-ISSN: 2347-6710|
|Volume 13, Issue 6, June 2024|
|DOI: 10.15680/IJIRSET.2024.1306169|

मैने ढूढ़े चारहुँ ओर में, बिछुरे भइया न मिले,
कै भइया बन को गए हाऊँऽऽ कै गए ससुराल,
मैंने ढूढ़े चारहुँ ओर में..........।
ना भइया वन कों गए न गए ससुराल।
मैंने ढूँढ़े चरहुँ ओर में............।
घोड़ा बँधा न घुड़साल में हाऽऽ ना
खूँटी टंगी तलवार
मैंने ढूढ़े चारहुँ ओर में..........।
युद्धन में मइया गए सो भारत, माँ के मये दुलार।
मैंने ढूढ़े चारहुँ ओर में, बिछुरे भइया ना मिले।

II. विचार-विमर्श

राजपूत भाटीय वृत्तांतों में चौहानों को चार अग्निकुल राजपूत कुलों में से एक बताया गया है, जिनका दावा है कि उनकी उत्पत्ति असुरों या राक्षसों के खिलाफ लड़ने के लिए माउंट आबू में एक बलि अग्नि-कुंड (अग्निकुंड) से हुई थी, जबकि अग्निकुल को सूर्यवंशी राजपूत वंश की एक अन्य शाखा माना जाता है।
इन चौहान राजपूतों के वंशजों ने स्वतंत्रता-पूर्व काल तक पश्चिमी और उत्तरी भारत में रियासतों पर शासन किया।
माणिक राय (685 ई.), चौहान वंश के पूर्वज, पश्चिमी राजवाड़ा में अजमेर और सांभर के स्वामी थे।
भूवैज्ञानिकों और पुरातत्ववेत्ताओं ने पाली और आसपास के क्षेत्र में प्रागैतिहासिक काल में आदिमानव के में बसने का पता लगा लिया है और उनकी यह स्थापना है कि पाली और इसके आसपास का इलाका भी एक समय विशाल पश्चिमी समुद्र से निकला था। प्राचीन 'अर्बुदा' प्रांत के एक भाग के रूप में, इस क्षेत्र को कभी 'बल्ल'-देश के नाम से भी जाना जाता था शायद इसलिए कि वैदिक युग में, महर्षि जाबाली वेदों की व्याख्या और अवगाहन के लिए इसी पाली क्षेत्र में रहे थे । कहते हैं- महाभारत युग में, पांडव भी अज्ञातवास (गोपनीय वनवास) के दौरान कुछ समय यहाँ की एक तहसील बाली के पास छिपे थे ।

लिखा मिलता है सन 120 ईस्वी में, कुषाण युग के दौरान, राजा कनिष्क ने रोहट और जैतारण क्षेत्रों पर विजय प्राप्त की थी, जो आज पाली के भाग हैं । सातवीं शताब्दी ईस्वी के अंत तक वर्तमान राजस्थान राज्य के अन्य हिस्सों सहित पाली पर भी चालुक्य राजा हर्षवर्धन के साथ का शासन था।10 वीं से 15 वीं शताब्दी की अवधि के दौरान, पाली की सीमाएं मेवाड़, गोडवाड़ और मारवाड़ से मिली हुई थीं। नाडोल क़स्बा चौहान-वंश की राजधानी थी। सभी राजपूत शासकों ने समय समय पर होने वाले विदेशी आक्रमणकारियों का विरोध किया लेकिन व्यक्तिगत रूप से वे एक-दूसरे की भूमि के लिए भी आपस में लड़े। पृथ्वीराज चौहान की हार के बाद, मोहम्मद गौरी के खिलाफ, इस क्षेत्र में राजपूत सत्ता छिन्न-भिन्न हो गई। पाली का गोडवाड़ क्षेत्र, मेवाड़ के तत्कालीन यशस्वी शासक महाराणा कुंभा के अधीन हो गया; हालाँकि पाली शहर- जिस पर पालीवाल ब्राह्मण शासकों का शासन था, अन्य पड़ोसी राजपूत शासकों के संरक्षण के कारण शांतिपूर्ण और प्रगतिशील बना रहा। पालीवाल ब्राह्मणों की आबादी अधिक होने से इसे उनका जातिसूचक नाम –पाली मिला ![8]

16 वीं और 17 वीं शताब्दी में पाली के आसपास के क्षेत्रों में कई युद्ध लड़े गये । अगर शेरशाह सूरी को राजपूत शासकों द्वारा जैतारण के पास गिरि की लड़ाई में हराया गया, तो मुगल सम्राट अकबर की सेना का गोडवाड़ क्षेत्र में महाराणा प्रताप के साथ युद्ध हुआ । मुगलों द्वारा लगभग पूरे राजपूताना पर विजय प्राप्त करने के बाद, मारवाड़ के वीर दुर्गादास राठौड़ ने मुगल सम्राट औरंगजेब से मारवाड़ क्षेत्र को छुड़ाने के लिए संगठित प्रयास किए क्यों कि तब तक पाली मारवाड़ राज्य के राठौड़-वंश के अधीन हो गया था । पाली का पुनर्वास महाराजा विजयसिंह द्वारा किया गया और जल्द ही एक बार फिर यह एक महत्वपूर्ण वाणिज्यिक केंद्र बन गया।

ब्रिटिश शासन में पाली

आउवा मारवाड़-जंक्शन के दक्षिण में 12 किमी की दूरी पर स्थित एक क़स्बा है । तब आउवा जोधपुर राज्य के सोजत जिले का एक हिस्सा था। 1857 में भारत में ब्रिटिश काल के दौरान, आउवा के ठाकुर के नेतृत्व में पाली के विभिन्न ठाकुरों ने ब्रिटिश शासन के खिलाफ सशस्त्र लड़ाई लड़ी थी । यह स्थान आज भले ही महत्वहीन हो लेकिन इसे 1857 की उथल-पुथल के दौरान बहुत प्रसिद्धि मिली जब इसके जागीरदार ठाकुर कुशलसिंह ने अंग्रेजों के खिलाफ विद्रोह किया।

International Journal of Innovative Research of Science, Engineering and Technology (IJIRSET)

Impact Factor 8.423

|www.ijirset.com | A Monthly Peer Reviewed & Referred Journal | e-ISSN: 2319-8753; p-ISSN: 2347-6710|

|Volume 13, Issue 6, June 2024|

|DOI: 10.15680/IJIRSET.2024.1306169|

III. परिणाम

बागवत की शुरुआत 25 अगस्त 1857 को एरनपुरा छावनी के भारतीय सिपाहियों द्वारा की गयी । सेना के ये सैनिक गांव अपनी छावनी छोड़ कर अपने हथियारों के साथ आउवा पहुंचे। स्वतंत्रता की लड़ाई के लिए ठाकुर खुशाल सिंह ने उनका नेतृत्व किया। आउवा किला ब्रिटिश सेना ने घेरा हुआ था और यह खूनी संघर्ष कई दिनों तक चला था। इस आंदोलन में मारवाड़ राज्य के ठाकुरों में अशोप, गुलर अलनियावास, भीमलिया, रेड़ावास, लाम्बिया और मेवाड़ राज्य के दूसरे ठाकुरों रूपनगर, लासानी, सलूम्बर, आसींद ने भी ठाकुर खुशाल सिंह की सैनिक मदद की थी ।

अजमेर से जनरल हेनरी लारेंज़ के आदेश से, 7 सितंबर 1857 को किलेदार अनदसिंह जोधपुर, ने आउवा किले पर आक्रमण किया । 8 सितंबर 1857 को लेफ्टिनेंट हेचकेट भी अनदसिंह के साथ युद्ध में शामिल हो गए। युद्ध के दौरान अधिकांश अंग्रेज सैनिक मौत के घाट उतार दिए गए और आउवा की सेना ने 1857 में स्वतंत्रता की अपनी पहली लड़ाई जीती ।

IV. निष्कर्ष

इस हार के बाद भारतीय स्वतंत्रता सेनानियों को सबक सिखाने के लिए जनरल लारेन्ज स्वयं ब्यावर से सेना लेकर 18 सितंबर 1857 को आउवा पहुंचा। जनरल लारेंज़ की मदद के लिए, जोधपुर से राजनीतिक-एजेंट कैप्टन मेसन भी अपनी बड़ी सेना के साथ आउवा आ पहुँचा।[9]

संदर्भ

1. "Lonely Planet Rajasthan, Delhi & Agra," Michael Benanav, Abigail Blasi, Lindsay Brown, Lonely Planet, 2017, ISBN 9781787012332
2. ↑ "Pali Online News (पाली समाचार)". मूल से 28 नवंबर 2020 को पुरालेखित. अभिगमन तिथि 2021-01-30.
3. ↑ http://www.theweekendleader.com/Causes/1289/ready-for-challenge.html
4. ↑ "संग्रहीत प्रति". मूल से 9 फ़रवरी 2015 को पुरालेखित. अभिगमन तिथि 10 फ़रवरी 2015.
5. ↑ http://www.bbc.co.uk/hindi/india/2014/11/141122_bullet_temple_rajasthan_rns
6. ↑ "संग्रहीत प्रति". मूल से 22 फ़रवरी 2015 को पुरालेखित. अभिगमन तिथि 22 फ़रवरी 2015.
7. "पोर्टल, राजस्थान सरकार". sirohi.rajasthan.gov.in. अभिगमन तिथि 2023-06-17.
8. ↑ "पोर्टल, राजस्थान सरकार". sirohi.rajasthan.gov.in. अभिगमन तिथि 2023-06-17.
9. ↑ "Godwad Circuit of Rajasthan-Royal Retreats Travel Places,Godwad Circuit of Rajasthan Attractions,Rajasthan Tourism Office,Godwad Circuit of Rajasthan Tours & Travels Agents,,Godwad, Delwara Jain temples, Vimal Vasahi, Jain Tirthankara, Adinath, Rana Kumbha of Mewar, Achaleshwar Mahadev, Shantinath Jain temple, Pali, Bali Fort, Nani Sirari, Rao Shobhaji, Rao Sahas Mal, Jalore Fort, Alauddin Khilji". web.archive.org. 2008-03-11. अभिगमन तिथि 2023-06-17.

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology (IJIRSET)

| e-ISSN: 2319-8753, p-ISSN: 2347-6710| www.ijirset.com | Impact Factor: 8.423| A Monthly Peer Reviewed & Referred Journal |

|| Volume 13, Issue 4, April 2024 ||

| DOI:10.15680/IJIRSET.2024.1304460 |

निर्मल वर्मा के उपन्यासों में यथार्थ चिंतन का बोध

राजेन्द्र कुमार
सहायक आचार्य, हिंदी साहित्य
राजकीय महाविद्यालय, मकराना

सारांश

हर रचना रचनाकार का अपने परिवेश के साथ के सार्थक संवाद का परिणाम है। इसी संवाद के तहत रचना की जीवन्तता बनी रहती है और वह समग्र रूप में जीवन की व्याख्या बन जाती है। इसलिए हर रचना की तह में कोई न कोई जीवनदृष्टि अवश्य विद्यमान रहती है एवं किसी रचना के अध्ययन का मतलब एक जीवनदृष्टि का अध्ययन है। साहित्यिक शोध का उद्देश्य भी यह पहचानने का परिश्रम होना चाहिए कि किसी रचनाकार की संपूर्ण रचना में या किसी समय विशेष की रचना में जीवन को किस प्रकार अभिव्यक्त किया गया है। यह एक प्रकार से बिताए गए जीवन को पुनः जीना है साथ ही उसकी जीवन्तता एवं विशेषता को पकड पाना भी। क्योंकि जीवन निरन्तर बदलता ही रहता है और उसके साथ जीवन यथार्थ भी। इसलिए हर युग के साहित्य के विश्लेषण या विवेचन की अपनी प्रासंगिकता अवश्य रहती है। हिन्दी साहित्य जगत में स्वाधीनता परवर्ती परिस्थिति की अलग भूमिका है। क्योंकि उसने तमाम जीवन दृष्टि को तथा तत्कालीन साहित्यिक मान्यताओं को आमूल बदल दिया। इसलिए बीसवीं शताब्दि के उत्तरार्द्ध की साहित्यिक मान्यताओं एवं प्रवृत्तियों को निर्धारित करने में स्वाधीनता परवर्ती भारतीय परिवेश की भूमिका निर्विवाद की है। इसने पूर्ववर्ती साहित्यिक प्रवृत्तियों से भिन्न प्रवृत्तियों को जन्म दिया। यहाँ आधुनिक मनुष्य अपनी तमाम विसंगतियों को झेलते हुए खड़ा है। यहीं से एक नितांत भिन्न संवेदना की शुरूआत होती है। हिन्दी साहित्य की सभी विधाओं में इस नयी संवेदना की झलक अवश्य दिखायी देती है। उस समय की सृजनात्मक प्रतिभाओं ने इस नयी संवेदना को पूरी गहराई के साथ आत्मसात कर लिया है। अज्ञेय, मोहन राकेश, राजेन्द्र यादव, मन्नू भण्डारी, कमलेश्वर, उषा प्रियंवदा, निर्मल वर्मा जैसे प्रतिभाधनी रचनाकारों ने इसको प्रश्रय दिया। इन सभी लोगों ने साहित्य की लगभग सभी विधाओं में अपनी लेखनी चलायी है और उसे एक नयी दिशा देने की कोशिश भी की है। इनमें निर्मल वर्मा को छोड़कर अन्य लगभग सभी रचनाकारों की साहित्यिक देन पर काफी अध्ययन एवं अनुसन्धान हो चुके हैं। पर निर्मल वर्मा की साहित्य–साधना पर अनुसंधानपरक दृष्टि पर्याप्त मात्रा में नहीं पड़ी है। उनका रचना संसार बहुत विशाल है। उपन्यास, कहानी, निबन्ध, यात्रासंस्मरण, डायरी आदि लगभग सभी गद्य विधाओं पर उन्होंने अपनी लेखनी चलायी है। इसलिए उनका साहित्य अवश्य गहन अध्ययन की माँग रखनेवाला है। अतः प्रस्तुत शोध आलेख में निर्मल वर्मा के हिन्दी उपन्यास साहित्य में योगदान का विश्लेषणात्मक अध्ययन करने का प्रयास किया गया है, इस हेतु वर्मा के पाँच महत्वपूर्ण उपन्यासों को आधार बनाया गया है।

मूल शब्द : वे दिन, लाल टीन की छत, एक चिथड़ा सुख, रात का रिपोर्टर, अंतिम अरण्य

| e-ISSN: 2319-8753, p-ISSN: 2347-6710| www.ijirset.com | Impact Factor: 8.423| A Monthly Peer Reviewed & Referred Journal |

|| Volume 13, Issue 4, April 2024 ||

| DOI:10.15680/IJIRSET.2024.1304460 |

निर्मल वर्मा का साहित्यिक परिचय :

निर्मल वर्मा का जन्म 3 अप्रैल सन् 1929 को शिमला में हुआ। उनका बचपन शिमला की पहाड़ियों में बीता। इसी कारण पहाड उनके अवचेतन में इस तरह बस गया है कि उनके संपूर्ण कृतित्व में पहाडी प्रतीक, पहाडी वातावरण और पहाडी सौन्दर्य प्रतिस्पन्दित है। निर्मल वर्मा आधुनिक युग के अद्वितीय लेखक हैं। उनके लेखन के पीछे गंभीर मनन चिंतन से ओतप्रोत सूक्ष्म रचना व्यक्तित्व है। उनकी पैनी रचनादृष्टि ही उनके लेखन को गंभीर बनाती है। मानव जीवन के यथार्थ को तलाशनेवाली है उनकी रचनाएँ। वे मानवीय संबन्धों के समर्थक है। जहाँ उन सम्बन्धों में विघटन होता है वहाँ एक अनजानी बेचेनी पैदा होती है। उस बेचेनी से मुक्त होने के लिए वे निरंतर अपने आसपास के लोगों से संबन्ध जोडने का प्रयत्न करते रहे हैं। इसलिए उनकी रचनाओं में संबन्धों के लिए संघर्षरत पात्र दिखायी देते हैं, कभी ऐसा जरूर होता है कि मैं किसी रेस्ट हाउस, किसी ट्रेन में होता हूँ तो मेरा वास्ता सचमुच ऐसे दम्पतियों से पड जाता है कि जिनके साथ मिलकर मुझे महसूस होता है कि जो मेरी बौद्धिक और अमूर्त परेशानी थी, उसकी एक मूर्ति इन दोनों के रिश्तों, संकेतों, बातचीत के द्वारा उद्घाटित हो रही है। तब पहली बार अनुभव दबाव के उस मान पर पहुँचता है जब मुझे लगता है कि मैं इस तैयारी में हूँ कि अब इसकी कोई कथा बुनी जा सकती है। भले ही निर्मल वर्मा एक कथाकार के रूप में जाने जाते हैं तथापि वे एक सशक्त निबन्धकार भी है। उनके निबन्धों में साहित्य, कला, राजनीति, संस्कृति, समाज जैसे विषयों पर उनका प्रौढ चिंतन अभिव्यक्त हुए हैं। इस अध्याय में उनके इस चिंतनपरक रचनाओं का विश्लेषण किया गया है। पाँचवाँ अध्याय है– निर्मल वर्मा के यात्रावृत्त और डायरी द्य निर्मल वर्मा ने देश–विदेश की यात्रा बहुत की है । इसका प्रभाव उनके रचनत्मक व्यक्तित्व पर भी पड़ा है। हर यात्रा एक अनुभव है। डायरी व्यक्ति के अंतरंग क्षणों का खुलासा है । दोनों आत्मांश से भरपूर रचनाएँ हैं ।

प्रमुख उपन्यास :

उपन्यास के क्षेत्र में निर्मल वर्मा का सृजनात्मक व्यक्तित्व अधिक निखर उठा है। अब तक के उनके पाँच अतिमहत्वपूर्ण उपन्यास निम्नलिखित है। "वे दिन" (1964), "लाल टीन की छत" (1974), "एक चिथडा सुख" (1979), "रात का रिपोर्टर" (1889) और "अंतिम अरण्य" (2000)

वे दिन (1964) –

निर्मल वर्मा का सर्वप्रथम एवं सर्वश्रेष्ठ उपन्यास हैं। "वे दिन" महायुद्धोत्तर पीढ़ी के संत्रास, घुटन, शून्यता, मूल्य हीनता, अकेलापन, मृत्यु का आतंक यूरोप के और संबन्धों की अर्थहीनता आदि को रेखांकित करनेवाला उपन्यास है "वे दिन" उपन्यास के शीर्षक से ही स्पष्ट है कि उसका संबन्ध अतीत की घटनाओं से है, पात्रों के अतीत से है। यहाँ पात्रों का यह अतीत सुखद स्मृतियों से संबद्ध नहीं है बल्कि युद्ध की अभिशप्त नियति से आक्रान्त है। उपन्यास की कथा भूमि प्राग है और उसका समय तीन दिनों में सिमटा हुआ है। आस्ट्रियन पति–परित्यक्ता युवती रायना अपने एकमात्र पुत्र को लेकर प्राग आती है। वहाँ तीन दिन रहती है। उपन्यास का कथानायक "मैं" एक भारतीय छात्र है। वह अवकाश के दिनों में विदेशी टूरिस्टों के लिए गाइड का काम करता है। वह तीन दिन रायना के साथ रहता है। वियना लौट जाने

| e-ISSN: 2319-8753, p-ISSN: 2347-6710| www.ijirset.com | Impact Factor: 8.423| A Monthly Peer Reviewed & Referred Journal |
|| Volume 13, Issue 4, April 2024 ||
| DOI:10.15680/IJIRSET.2024.1304460 |

के पहले एक रात वह "मैं" के साथ गुजारती है। "मैं" और रायना की कथा के समानान्तर टी. टी., फ्रांज और मारिया की कहानी भी चलती है। हर एक पात्र अपने परिवेश से कटा हुआ है। उपन्यास में निर्मल जी के जीवन का एक अंश भी जुड़ा हुआ है। अपने यूरोप प्रवास के दौरान निर्मल जी रोम गए थे। ये उनकी बेकारी के दिन थे, इसलिए पैसे की कमी थी। वे एक होटल में रह रहे थे। शाम को कॉफी पीने निकले तो इंगलैंड की एक महिला से मुलाकात हुई। बातचीत के दौरान उस महिला ने बताया कि वे एक टूरिस्ट ऑफिस में काम कर रही हैं। एक टूरिस्ट गाइड के रूप में वे वहाँ आयी हैं। भारत आने पर रोम में मिली उस महिला को लेकर प्राग शहर के परिप्रेक्ष्य में एक कथा निर्मल जी के मन में रूपायित होने लगी, उसी का परिणाम है "वे दिन"। उपन्यास का सीधा संबन्ध न तो उस महिला से है और न ही रोसे। लेकिन इन सब ने मिलकर उसके लिए उपयुक्त रूपबन्ध तैयार किया है। वास्तव में इसका सीधा संबन्ध अपने जीवनानुभव से ही है। निर्मल के ही शब्दों में, "वे दिन" तीन–चार दिनों की कहानी है। जहाँ एक व्यक्तित्व दूसरे व्यक्तित्व से मिलता है। दोनों अपने अतीत को एक–दूसरे के साथ जीते हैं और फिर वे अलग हो जाते हैं। इस समूचे परिवेश में लेखक जो कुछ दिनों के अनुभवों से जीवन के बारे में सत्य प्राप्त करता है, वही उस उपन्यास की बात है। ज्योतिष जोशी के अनुसार – "वे दिन" में निःसन्देह युद्धोत्तर यूरोपीय मानवीय नियति की वह सूक्ष्म और पारदर्शी तस्वीर मिलती है जिससे तत्कालीन स्थितियों को न केवल समझने में मदद मिलती है बल्कि महसूस कर सकने की स्थितियाँ भी बनती है। इस प्रकार यह उपन्यास तत्कालीन सामाजिक यथार्थ से आतंकित मानव जीवन की भीषणता का सही दस्तावेज निकलता है।

लाल टीन की छत (1974) –

निर्मल वर्मा का दूसरा उपन्यास है "लाल टीन की छत"। इस उपन्यास में काया नामक एक छोटी लडकी की कथा है जो किशोरावस्था और यौवन के बीच की वयः सन्धि में है। वह शिमला के एक पहाडी शहर में अपने छोटे भाई, माँ और नौकर मँगतू के साथ लाटीन की छतवाले मकान में रहती है। उसकी पडोसी है मिस जोसुआ। यह कथा उन दिनों की है जब सर्दियों में काया के बाबु जी काम के सिलसिले में दिल्ली गए हुए थे और उसकी माँ गर्भवती थी। इस स्थिति में काया अपने को बिलकुल अकेला पाती है और अपने चारों ओर एक अलग दुनिया बनाकर भ्रम, आतंक और रहस्य की अनेक अनुभूतियों से गुजरती है। इस उपन्यास के तीन खण्ड है– "एक साँस में", "शहर से ऊपर" और "तसल्ली से परे"। यह उपन्यास भी निर्मल जी के जीवन से संबन्धित है। बचपन में वे भी काया की मनःस्थिति से गुजरे हैं।

निर्मल जी के परिवार की दिक्कत यह थी कि वह निरंतर उन्मूलित रहा। क्योंकि उनके पिता अंग्रेजों के जमाने में सरकारी अफसर थे। अतः उन्हें शिमला और दिल्ली में रहना पडता था। इसलिए उनका परिवार पूरी धार्मिक पीठिका से अलग हो गया, पिता के परिवार से भी और माँ के परिवार से भी। उन्मूलन का यही भाव "लाल टीन की छत" में भी आया है। उसी प्रकार शिमला में बहुत ऊँचाई पर एक काली मन्दिर था। देवी काली के प्रति उनकी बहन की गहरी आस्था थी। इसलिए हर शाम निर्मल उनके साथ वहाँ जाते थे। उस मंदिर का वातावरण बिल्कुल शान्त था।

| e-ISSN: 2319-8753, p-ISSN: 2347-6710| www.ijirset.com | Impact Factor: 8.423| A Monthly Peer Reviewed & Referred Journal |

|| Volume 13, Issue 4, April 2024 ||

| DOI:10.15680/IJIRSET.2024.1304460 |

उनकी बहन वहाँ बैठी रहती और वे छुपा–छुपाई का खेल खेला करते थे। बिल्कुल यही वातावरण हम "लाल टीन की छत" में भी देख सकते हैं। उसी प्रकार इसमें पहाडिम स्त्री का जो प्रसंग आता है वह भी निर्मल का अपना अनुभव है। वे कहते हैं, "लाल टीन की छत की पहाडिने स्त्री को उसके चाचा उसके गाँव से ले आए थे। वर्षों पहले शहर के लोग पहाड़ों पर आते थे और हजार दो हजार रुपये देकर औरतों को खरीदकर ले आते थे। वे औरतें उनकी मिस्ट्रेस की तरह रहती थीं। ऐसा मैंने अपने परिवार में भी कई लोगों के साथ देखा है। उन औरतों का जीवन उस परिवार के साथ संलग्न भी रहता था और उसके बाहर भी। उस परिवार में रहनेवाले बच्चों के लिए इस तरह की औरतें या इस तरह के व्यक्ति हमेशा एक अजीब कौतूहल और वेदना जगाते हैं।" १० पहाडन स्त्री नथवाली औरत के रूप में आती है और चाचा का बेटा बीरू उससे नफरत करता है। इस प्रकार इस उपन्यास में भी निर्मल वर्मा ने अपने अनुभवों को ही अभिव्यक्ति दी है। लेकिन निजी अनुभव के परे अपने समय के जीवन यथार्थ को नए ढंग से नई संवेदना के साथ अभिव्यक्त करने का कार्य भी इस उपन्यास में हुआ है। अतः कुल मिलाकर यह उपन्यास उपन्यासों के पुराने तंत्र को तोडने की कोशिश है, आधुनिकता धारणा के स्तर पर न होकर संवेदना के स्तर पर है।

एक चिथड़ा सुख (1979) –

"एक चिथडा सुख" निर्मल वर्मा का तीसरा उपन्यास है। इस उपन्यास का केन्द्र दिल्ली है। उपन्यास की नायिका बिट्टी इलाहाबाद की है। वह स्वतंत्र जीवन बितानेवाली औरत है। वह डैरी के निर्देशन में नाटक करती है। इस उपन्यास के अन्य पात्र हैं इरा और नित्तीभाई। वे भी नाटक में काम करते हैं। इन सबके अलावा एक और पात्र है मुन्नू। वह उपन्यास में आदि से अन्त तक एक नरेटर के रूप में आता है। मुन्नू बिट्टी का कजिन है और प्रायः बीमार रहता है। इसलिए वह बिट्टी के साथ रहता है। मुन्नू अपने जीवन के हर अनुभव को एक डायरी में नोट करता जाता है। यह उपन्यास उसकी इस डायरी का ही क्रमबद्ध संस्करण है। इसमें लेखक ने मध्यवर्गीय युवापीढी के मन को परखने की कोशिश की है। निर्मल के ही शब्दों में, "समूचा उपन्यास एक ऐसे प्रश्न पर टिका हुआ है, जिसे हर संवेदनशील व्यक्ति कभी–न–कभी अपने से पूछता है। खासकर उच्चवर्ग से आनेवाले वे युवा लोग, जो विशेष सुविधाओं में जीते हैं। क्या इन सुविधाओं को भोगते हुए हम अपने समाज, अपने जीवन, स्वयं अपने आत्म के प्रति ईमानदार और सच्चे रह सकते हैं? उपन्यास के लगभग सब पात्र भीषण व्यक्तिगत अन्तर्द्वन्द्वों से गुजरकर प्रश्नों को सुलझाने का प्रयास करते हैं। मैं इस उपन्यास में जानबूझकर मध्यवर्ग के पढ़े–लिखे पात्रों को लिया था, जो थियेटर में अपने जीवन के ड्रामे को मंचित करते हैं। और उन सब सुविधात्मक समझौतों और आत्म–छलनाओं को भेदने का प्रयत्न करते हैं, जिन्होंने उनके अंदरूनी जीवन को इतना खोखला बना दिया है। मेरे विचार में यह वह बिंदु है, जहाँ प्रामाणिक यथार्थ खोजने में ही साहित्य अपनी सार्थक भूमिका संपन्न करता है, अप्रामाणिक, झूठे और आत्म–सम्मोहित विकल्पों की खोट को दर्शाता है। ऐसे उपन्यास हमें आत्म–मथन और आत्मालोचना की उत्पीडित प्रक्रिया में से गुजरने पर विवश करते । इस प्रकार इस उपन्यास में एक प्रकार से जिन्दगी के सुखों और दुःखों के अन्दरूनी रिश्तों एवं जादुओं को परखने के साथ साथ उसके द्वारा जीवन को परिभाषित करने का निरन्तर प्रयास भी है। "समग्रतः यह उपन्यास आधुनिकता की सर्वव्यापी धुंध

| e-ISSN: 2319-8753, p-ISSN: 2347-6710| www.ijirset.com | Impact Factor: 8.423| A Monthly Peer Reviewed & Referred Journal |

|| Volume 13, Issue 4, April 2024 ||

| DOI:10.15680/IJIRSET.2024.1304460 |

में सोते जा रहे, मनुष्य के बुनियादी सुख और उसकी मौलिक इच्छाओं– आकांक्षाओं के बारे में कुछ जरूरी सवाल उठाता है।

रात का रिपोर्टर (1989) –

“रात का रिपोर्टर” निर्मल वर्मा का चौथा उपन्यास है। इसमें रिशी की कथा है जो एक रिपोर्टर है। रिशी से ऊबकर उसकी पत्नी उमा पागल हो जाती है और वह अस्पताल में है। रिशी बिन्दु से प्रेम करता है। उपन्यास में राजनीतिक गतिविधियों में संलग्न अनूप भाई हैं। वह जेल में है। उनका दोस्त दयाल साहब है जिसके द्वारा आपातकालीन स्थिति को उजागर किया गया है। आपातकाल के समय लेखकों और रचनाओं पर जो पाबंदी लगायी गयी थी, उसका शिकार है रिशी। इसमें लेखक ने आपातकालीन स्थिति की अभिव्यक्ति के द्वारा मात्र राजनीतिक हलचल को ही अभिव्यक्त नहीं किया बल्कि समाज में और व्यक्ति में व्याप्त आतंक को भी अंकित किया है। आपातकाल एक ऐसी त्रासद घटना थी जिससे हमारे तमाम अधिकार छीन लिए गए थे। इस उपन्यास के पात्रों में बाह्य एवं आन्तरिक स्तर पर एक प्रकार का डर छाया हुआ है। बाह्य यथार्थ का आतंक व्यक्ति के भीतर को भी समान रूप से आतंकित कर देता अवश्य है, क्योंकि बाह्य और आन्तरिक का भेद ही व्यर्थ है, ”निर्मल वर्मा ने “रात का रिपोर्टर” में यह दिखलाने का प्रयत्न किया है कि बाह्य और आन्तरिक जगत में कोई द्वित्व नहीं। दोनों एक दूसरे से छाया प्रतिछाया की भाँति हिलते मिलते रहते हैं, प्रभावित होते रहते हैं।

अंतिम अरण्य (2000) –

“अंतिम अरण्य” निर्मल वर्मा का पाँचवाँ उपन्यास है। उपन्यास का केन्द्रीय पात्र मेहरा साहब है जो अपने जीवन की तमाम अर्जित क्लान्तियों के साथ मृत्यु के हाशिए पर खडे हैं। उनकी पत्नी दीवा का निधन हो चुका था। दीवा मेहरा साहब की दूसरी पत्नी थी। उपन्यास की और एक पात्रा है तिया जो मेहरा साहब की पहली पत्नी से जन्मी पुत्री है। माँ बाप के प्रेम से वंचित वह हमेशा अकेली रहती है। उपन्यास के आदि से अन्त तक दिखायी देनेवाला पात्र है “मैं” जो हमेशा मेहरा साहब के साथ रहता है और उनकी बातों को एक नोट बुक में नोट करता रहता है। इसके अन्य पात्र हैं निरंजन बाबू, अन्ना जी, नौकर ननकू, डॉ. सिंह आदि। इसके ज्यादातर पात्र अपने दीर्घकाल के कामकाजी जीवन से सेवानिवृत्त होकर हिमालाय के पहाडी प्रदेश में आकर रहने वाले हैं। मृत्युबोध और आश्रयहीनता के कारण जो भयानक आकांक्षाएँ मानव मन में उत्पन्न हो जाती हैं उन्हीं का सच्चा चित्रण है इस उपन्यास में। मृत्यु की तरफ धीरे धीरे बढ़ते मेहरा साहब में हम यह विसंगत स्थिति देख सकते हैं, ”यह सिर्फ मृत्यु के आख्यान तक सीमित नहीं हैं। किसी की मृत्यु उसके जीवन की सत्ता का कितना सच्चा और कितना जीवन्त दस्तावेज हो सकती है, इस सत्य का सूक्ष्म एवं संवेदनात्मक उद्घाटन भी है।

| e-ISSN: 2319-8753, p-ISSN: 2347-6710| www.ijirset.com | Impact Factor: 8.423| A Monthly Peer Reviewed & Referred Journal |
|| Volume 13, Issue 4, April 2024 ||
| DOI:10.15680/IJIRSET.2024.1304460 |

उपसंहार :

इस प्रकार हम पातें है की साहित्य की ऐसी कोई विधा नहीं जिसमें निर्मल वर्मा का सान्निध्य न हुआ हो। वे दरअसल चिंतक तथा सृजनकार दोनों का मिला जुला रूप है। वे माँग पर नहीं लिखते। अपने जीवन में उन्होंने जो कुछ अनुभव किया, देशी–विदेशी जीवन क्रम में जिन सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, साहित्यिक विचारों और चिन्ताओं ने उन्हें प्रभावित किया उन्हीं को उन्होंने उपन्यास, कहानी, निबंध, यात्रा संस्मरण जैसी विभिन्न विधाओं में रूपांतरित किया हैं। सृजन की इस क्षमता ने उन्हें हिन्दी के वरिष्ठ लेखकों की पंक्ति में अग्रणी बना दिया। कहानी या उपन्यास लिखते समय वे अपने को उस समय से तथा आसपास के लोगों से जुडा हुआ पाते हैं। इससे उनके सृजनात्मक तथा वैयक्तिक जीवन में एक प्रकार की एकनिष्ठता दिखायी देती है। क्योंकि एक लेखक अपने तथा अपने समय के जीवन को कुरेदते हुए जीवन सत्य की तलाश में लगा रहता है। रचना में वह उस जीवन को पुनः जीवित कर लेता है, "जितना भी लेखन या सृजन है वह अपने जीवन में हुई मृत्युओं की श्रृंखलाओं को कविताओं या कहानियों के जीवित क्षण में रूपायित करने की कोशिश है।

संदर्भ ग्रंथ :

1. निर्मल वर्मा – दूसरी दुनिया
2. पूर्वग्रह मार्च अप्रैल 1999 अंक 47,
3. वागर्थ जुलाई 2001, 86
4. निर्मल वर्मा – मेरे साक्षात्कार
5. डॉ. प्रेमसिंह – निर्मल वर्मा सृजन और चिंतन
6. इन्द्रनाथ मदान – आधुनिकता और हिन्दी उपन्यास